Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दैनिक स्वाध्याय

और

गीता-सार

1.2
VHP
120म

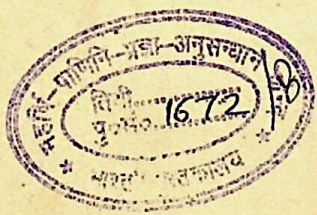

सम्पादक तथा अनुवादक
रत्न चन्द्र शर्मा, एम. ए., एम. ओ. एल.,
दयाल सिंह कालेज, करनाल

राय साहिब चौधरी प्रताप सिंह ट्रस्ट,
माडल टाऊन, करनाल।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दैनिक स्वाध्याय

और

गीता-सार

120म

सम्पादक तथा अनुवादक
रत्न चन्द्र शर्मा, एम. ए., एम. ओ. एल.,
दयाल सिंह कालेज, करनाल

कौशलेश्वर कुमार अली
मोतीहारी · १५.३.०४.

राय साहिब चौधरी प्रताप सिंह ट्रस्ट,
माडल टाऊन, करनाल।

मूल्य : एक रुपया

प्रथम संस्करण : १९६८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समर्पण

महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी को जिन्होंने
अपना समस्त जीवन भारतीय संस्कृति तथा
शिक्षा के प्रचार और प्रसार में अर्पित किया ।

प्रकाशक :-
राय साहिब चौधरी प्रताप सिंह ट्रस्ट,
५७ एल, माडल टाऊन,
करनाल ।

मुद्रक —
सरदार नानक सिंह,
मालिक न्यू लाईट प्रिंटिंग प्रैस,
रेलवे रोड, करनाल ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनुक्रमणिका

		पृष्ट
१	वैदिक प्रार्थना	२
२	प्रातःस्मरण	८
३	विराट् स्वरूप	१०
४	शिव-सङ्कल्प	१४
५	ईशावास्योपनिषद्	१६
६	उपनिषत्-स्मरण	२४
७	गीता-सार	२८
८	भजनावली	७४
९	राष्ट्र-गान	८२
१०	विविध धर्म परिचय	८८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक 'दैनिक स्वाध्याय और गीतासार' राय साहिब चौधरी प्रताप सिंह चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित की जाने वाली सातवीं पुस्तक है। इस का प्रकाशन राय साहिब चौ० प्रताप सिंह द्वारा अपने दिवंगत पुत्र श्री कश्मीरी लाल की स्नेहपूर्ण स्मृति में किया जा रहा है। परम पिता परमात्मा से सविनय प्राथना है कि वे दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें।

यह पुस्तक विद्यालयों और पाठशालाओं के विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। इस का मुख्य उद्देश्य उन्हें श्रीमद्भगवद्गीता के विविध विषयों से परिचित कराना है और सार रूप में गीता के गम्भीर ज्ञान की शिक्षा देना है ताकि वे अपने इस लोकप्रसिद्ध एव सर्वमान्य ग्रन्थ-रत्न से लाभान्वित हो सकें। इसी उद्देश्य से गीता के विभिन्न अध्यायों में से लगभग १४० श्लोक छांट कर उन का विषयानुरूप संकलन किया गया हैं और साथ ही हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। गीता के श्लोकों के साथ साथ वैदिक वाङ्मय के कुछ रत्नों को भी नमूने के रूप में रख दिया है ताकि विद्यार्थियों को वैदिक साहित्य को पढ़ने की भी प्रेरणा मिले। प्रार्थना मन्त्र, पुरुष सूक्त की विराट् वर्णन सम्बन्धी कुछ ऋचाए, शिवसङ्कल्प के मन्त्र, ईशावास्योपनिषद् के अठारह मन्त्र और तैत्तिरीय, कठ तथा मुण्डक उपनिषदों की महत्त्व-पूर्ण सूक्तियां इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। अन्त में कुछ भक्ति सम्बन्धी तथा राष्ट्रीय गीत भी दिये हैं और तुलनात्मक अध्ययन के लिए विभिन्न धर्मों के प्रवर्तकों और धर्मग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय भी दिया है। भक्ति सम्बन्धी गीतो मे तुलसी, सूर, मीराँ, कबीर जसे भक्तों और सन्तों के भी कुछ गीत रखे हैं।

आशा है कि इस छोटी पुस्तक से विद्यार्थियों का हित-साधन होगा एवं अन्य सामान्य स्वाध्याय-प्रिय लोग भी लाभ उठा सकेंगे।

५-१-१९६८

विनीत-

रत्न चन्द्र शर्मा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दैनिक स्वाध्याय

और

गीता-सार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वैदिक प्रार्थना

(१)

१ ओ३म् भूर्भुवः स्वः
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। (ऋग्वेद ३/६२/१०)

२ अद्या नो देव सवितः प्रजावत् सावीः सौभगम् ।
परा दुःष्वप्न्यं सुव ।। (ऋग्वेद ५/८२/४)

३ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ।। (ऋग्वेद ५/८२/५)

४ त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अधाते सुम्नमीमहे ।। (ऋग्वेद ८/९८/११, अथर्ववेद २०/१०८/२)

५ नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे ।
नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे । (यजुर्वेद ३६/२१)

(२)

१ ओ३म् हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे
भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

1672

वैदिक प्रार्थना

(१)

१ हे सच्चिदानन्द, सर्वोत्पादक, सर्वदुःखनाशक, सर्वव्यापक परमात्मा आप को नमस्कार है। हम सविता देव (सब के उत्पादक, संरक्षक और सर्वशक्तिमान् परमेश्वर) के उस परम श्रेष्ठ प्रकाश का भजन करते हैं जो हमारी मतियों को शुभ कर्मों की प्रेरणा देता रहे।

२ हे सविता देव ! हमें प्रज्ञा दे और साथ ही मंगलमय ऐश्वर्य भी दे। चिन्ता से उत्पन्न होने वाली निद्रा की विकलता को हम से दूर कर।

३ हे सविता देव ! हम से सब बुराइयों को दूर कर। जो कुछ मंगलकारक है वह हमें प्रदान कर।

४ हे सब को बसाने वाले ! सैंकड़ों कर्मों को करने वाले परमेश्वर ! तुम ही हमारे पिता हो; तुम ही हमारी माता हो। इस लिए हम तुम्हारा ही शुभ आशीर्वाद (सुख और मंगलकामना) चाहते हैं।

५ हे विद्युत् (बिजली) में चमकते हुए देव ! तुम्हें नमस्कार है। हे बादल में गरजते हुए देव ! तुम्हें नमस्कार है। हे भगवन् ! तुम जिधर से भी प्रकट होते हो, सुख देते हो। तुम्हें नमस्कार है, बार बार नमस्कार है।

(२)

१ जो स्वप्रकाशस्वरूप है और जिस ने सभी प्रकाशमान पदार्थ उत्पन्न तथा धारण किये हुए हैं, जो सब से पहले विद्यमान था

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (ऋग्वेद १०/१२१/१)

२ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व
उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (ऋग्वेद १०/१२१/२)

३ यः प्राणतो निमिषतो महि-
त्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (ऋग्वेद १०/१२१/३)

४ यस्येमे हिमवन्तो महित्वा
यस्य समुद्रं रसया सहाहुः ।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (ऋग्वेद १०/१२१/४)

५ येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा
येन स्वः स्तभितं येन नाकः
यो अन्तरिक्षे रजसा विमानः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (ऋग्वेद १०/१२१/५)

(३)

१ ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे
सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनात्
मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥ (ऋग्वेद ७/५९/१२)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और समस्त उत्पन्न जगत् का स्वामी है, उसी ने इस भूमि और सूर्य आदि को धारण किया हुआ है। उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर की हम भक्ति करें।

२ जो शारीरिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का देने वाला है, जिस की सब देवता और विद्वान् लोग उपासना करते हैं और जिस के सत्यस्वरूप शासन का वे पालन करते हैं, जिस की छाया (आश्रय) अमरता प्रदान करती है, जिस की विमुखता ही मृत्यु है, उस सर्वशक्तिमान् देव की हम श्रद्धा और प्रेम से भक्ति करें।

३ जो अपनी अनन्त महिमा से प्राणी जगत् और अप्राणी जगत् का एक ही राजा है, जो दो पैरों वाले और चार पैरों वाले सभी प्राणियों की रचना करता है, उस परमात्मा की हम प्रेम और श्रद्धा से भक्ति करते हैं।

४ ये सब हिमाच्छादित पर्वत जिस का महत्त्व बताते हैं, नदियों सहित सागर जिस की महिमा के सूचक हैं, ये विस्तृत दिशाएं जिस की भुजाएं हैं, उस परमात्मा की हम प्रेम और श्रद्धा से भक्ति करते हैं।

५ जिस परमात्मा ने उच्च द्युलोक को और दृढ़ भूमि को धारण किया है, जिस ने स्वर्लोक को अथवा सुख और मुक्ति को धारण किया है, जो अन्तरिक्ष में लोक-लोकान्तरों को चलाता है, उस परमात्मा की हम प्रेम और श्रद्धा से भक्ति करें।

(३)

१ हम त्र्यम्बक देव की पूजा करते हैं। वह सुखदायक और पुष्टिवर्धक है। उस की कृपा से मैं मृत्युमय जीवन से वैसे ही छूट जाऊँ जैसे तरबूज़ (पक कर अपने आप) बेल से छूट जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षिभिर्यजत्राः : ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभि–
र्व्यशेम देवहित यदायुः (ऋग्वेद १/८९/८)

३ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं
शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शत–
मदीनाःस्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः
शतात् । (यजुवद ३६/२४)

४ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु ॥ (यजुवद ३२/१४)

५ मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः ।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे ॥ (यजुर्वेद ३२/१५)

(४)

१ ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायता-
मा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी
महारथो जायताम् ।
दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः
पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः
सभेयो युवास्य यजमानस्य
वीरो जायताम् ।
निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु ।
फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् ।
योग-क्षेमो नः कल्पताम् ॥ (यजुर्वेद २२/२२)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ हे देव ! हम कानों से अच्छी बातों को ही सुनें। हे पूजनीय ! हम आंखों से अच्छी वस्तुओं को ही देखें। अपने स्थिर अंगों से और स्वस्थ शरीरों से हम आप की सदा स्तुति करते रहें। हमारे शरीर देव-प्रदत्त आयु भर ठीक चलते रहें।

३ वह सर्वद्रष्टा, सर्व-हितकारक ईश्वर सब से अधिक प्रकाशमान है। वह सृष्टि से पूर्व भी विद्यमान था। उस की अपार कृपा से हम सौ वर्ष तक देखते रहें, सौ वर्ष तक जीते रहें, सौ वर्ष तक सुनते रहें, सौ वर्ष तक बोलते रहें, सौ वर्ष तक अदीन बन कर रहें और इसी प्रकार सौ वर्ष से भी अधिक समय तक बने रहें।

४ हे सर्वप्रकाशमय ईश्वर ! देवता और पितर, ऋषि मुनि और विद्वान् जिस बुद्धि की कामना करते हैं, उसी का प्रदान कर के मुझे भी मेधावी बनाओ।

५ वरुण देव (सर्वश्रेष्ठ ईश्वर) मुझे मेधा प्रदान करें, प्रजापति अग्निदेव (स्वप्रकाश ईश्वर) मुझे मेधा प्रदान करे; इन्द्र देव (सर्व ऐश्वर्यमान् ईश्वर) और वायु देव (अनन्त बलयुक्त ईश्वर) तथा धाता (सब को धारण करने वाले ईश्वर) मुझे मेधा का प्रदान करे।

(४)

१ हे पर ब्रह्म परमेश्वर ! हमारे राष्ट्र में तप, त्याग और ज्ञान से सुशोभित ब्राह्मण पैदा हों, प्रभुत्वशाली, शस्त्रास्त्र में निपुण, शत्रुओं का नाश करने वाले वीर राजन्य (क्षत्रिय) उत्पन्न हों; दुधार गौएं, भारी बोझ उठाने वाले बैल, वेग-गामी घोड़े, गृह-कार्यों मे निपुण महिलाएं, शत्रुओं का नाश करने वाले युद्धप्रवीण वीर युवक उत्पन्न हों। उचित समय पर वर्षा होती रहे। हमारी फलों से लदी हुई खेतियां (वनस्पति) सदा पकती रहें। हमारा सुख-कल्याण निरन्तर बढ़ता रहे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रातः स्मरण

१ प्रातर्भजामि मनसा वचसामगम्यं
वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ।
यन्नेति नेति वचनैर्निगमा अवोच-
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥

२ प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्ण
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ
रज्ज्वाँ भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥

३ यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यः स्तवैः
वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥

४ त्वमेव माता च पिता त्वमेव ।
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव ।
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रातः स्मरण

१ जो मन और वाणी से अगम्य (अगोचर) है, जिस की कृपा से समस्त वाणी प्रकट होती है, निगम (वेद-शास्त्र) 'नेति नेति' (वह यह नहीं, यह नहीं) कह कर जिस का निरूपण करते हैं, ऋषियों ने जिसे देवाधिदेव (देवताओं का देवता), अजन्मा, अच्युत, अग्रय (सब का आदि) कह कर पुकारा है, उस का मैं प्रातः काल भजन करता हूं।

२ प्रातःकाल उस को नमस्कार करता हूं जो अन्धकार से परे है, दिव्य तेजोमय सूर्य-स्वरूप हैं, पूर्ण सनातन पुरुषोत्तम हैं, जिस के अनन्त स्वरूप के भीतर यह समस्त संसार ऐसे ही प्रतिभासित हो रहा है जैसे रस्सी में सांप।

३ ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र, रुद्र, मरुत् आदि देवता अपनी दिव्य स्तुतियों से जिस की स्तुति करते हैं; साम गान करने वाले उद्गाता पदों के क्रम सहित सांग वेदों और उपनिषदों से जिस का गान गाते हैं; योगी लोग ध्यानावस्थित मन से जिस का दर्शन करते हैं; देवों और असुरों के समूह भी जिस का अन्त नहीं जान सके; उस देवाधिदेव को मेरा नमस्कार है।

४ हे ईश्वर ! तुम ही मेरे माता-पिता हो, तुम्हीं बन्धु हो और तुम्हीं मित्र हो, तुम्हीं विद्या हो और तुम्हीं धन हो; हे देवाधिदेव ! तुम्हीं मेरा सब कुछ हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विराट् स्वरूप

१ ओ३म् सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।। †
(ऋग्वेद १०/९०/१)

२ पुरुष एवेदँसर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।। (ऋग्वेद १०/९०/२)

३ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।।
(ऋग्वेद १०/९०/३)

४ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ।।
(ऋग्वेद १०/९०४)

५ तस्माद्विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ।।
(ऋग्वेद १०/९०/५)

---

† "विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्" (भगवद्गीता १०/४२) अर्थात् "मैं जगत् को विशेष रूप से थाम कर बैठा हूं। यह जगत् मेरे एक अंश में स्थित है।"

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विराट्-स्वरूप

१ समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त परम पुरुष परमात्मा के हज़ारों सिर, हज़ारों आंखें और हज़रों चरण हैं। वह समस्त भूमि को सब ओर से वरण कर के दश अंगुल अतिक्रमण कर के विराजमान है। अर्थात् सर्वव्यापक और सर्वातिशायी है।

२ यह सब कुछ वह परम पुरुष ही है जो कि भूत और भविष्य है। वह परमात्मा मोक्ष का स्वामी है और जो कुछ अन्न से बढ़ता है वह उस का भी स्वामी है।

३ इस विश्व की बहुत बड़ी महिमा है, परन्तु वह परम पुरुष परमेश्वर तो इस से भी कहीं अधिक बड़ा है। समस्त भूत (उत्पन्न पदार्थ) उस के एक चरण के समान हैं। उस के तीन चरण प्रकाशमय स्वरूप में अमृत अर्थात् अविनाशी हैं

४ तीन चरणों वाला वह परमात्मा सब से ऊपर और सर्वोत्कृष्ट रूप से विद्यमान हैं। उस का व्यक्त एक चरण यहां जगत् रूप से प्रकट हुआ है। वह प्रभु सर्वत्र व्याप्त है वह अशन (भोजन-व्यापार से युक्त चेतन प्राणियों) और अनशन (भोजनव्यापार शून्य अचेतन पदार्थों) सभी में विद्यमान है।

५ उस परम पुरुष से विराट् अर्थात् ब्रह्माण्ड रूप महान् शरीर उत्पन्न हुआ। उस विराट् अर्थात् ब्रह्माण्डमय शरीर के ऊपर अध्यक्ष रूप से वह परम पुरुष स्थित है। वह व्यक्त हो कर भी सब से पृथक् रहता है और सब से बड़ा है। विराट् के प्रकट होने के पश्चात् परम पुरुष परमेश्वर ने भूमि को उत्पन्न किया और उस के पश्चात् नाना शरीर उत्पन्न किये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्च ये ॥
(ऋग्वेद १० ९०/८)

७ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥
(ऋग्वेद १०/९०/९)

८ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥
(ऋग्वेद १०/९०/१०)

९ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥
(ऋग्वेद १०/९०/१३)

१० नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिश. श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥
(ऋग्वेद १०/९०/१४)

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६ समस्त ब्रह्माण्ड को अपने अन्दर आहुति के समान धारण करने वाले उस यज्ञ रूप परमेश्वर से पुष्टिकारक, तृप्तिकारक और प्राणदायक अन्नादि और घृत, मधु, दुग्ध, जल आदि उत्पन्न हुए। उस ने ही सब प्राणियों की, वायु में उड़ने वाले पक्षियों की, वनों में रहने वाले सिंह आदि पशुओं की और ग्रामों में रहने वाले गौ भैंस आदि पशुओं की रचना की।

७ उस सर्वहुत यज्ञस्वरूप परमेश्वर से ही ऋचाएं (ऋग्वेद) और साम (सामवेद) उत्पन्न हुए। उसी से छन्द (अथर्ववेद) उत्पन्न हुए। उस से ही यजुः (यजुर्वेद) उत्पन्न हुआ।

८ उसी से ही अश्व उत्पन्न हुए और उसी से वे अन्य सभी पशु उत्पन्न हुए जो दोनों जबड़ों में दान्त रखते हैं। उसी से गौ आदि जन्तु उत्पन्न हुए तथा उसी से भेड़ बकरी आदि छोटे पशु भी उत्पन्न हुए।

९ उस के मन से (मनन-सामर्थ्य से) चन्द्रमा उत्पन्न हुआ। उस के चक्षु से अथवा चक्षुस्थानीय सूर्य उत्पन्न हुआ। मुख से आग और इन्द्र अर्थात् तेजस्तत्त्व उत्पन्न हुए और प्राण से वायु उत्पन्न हुआ।

१० उस विराट् पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष कल्पित किया गया तथा सिर से विशाल आकाश कल्पित हुआ। उस के पैरों से भूमि, कानों से दिशाएं और इसी प्रकार समस्त लोकों की सृष्टि हुई।

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिव-सङ्कल्प

१ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं
तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/१)

२ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो
यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/२)

३ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च
यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/३)

४ येनेद भूतं भुवनं भविष्यत्
परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/४)

५ यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन्
प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/५)

६ सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्
नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। (यजुर्वेद ३४/६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिव सङ्कल्प

१ यह मन विचित्र दिव्य प्रकाश है ! यह जाग्रतावस्था में भी (जागते होने पर भी) दूर चला जाता है। यह स्वप्नावस्था में भी (सोते होने पर भी) वैसे ही घूमता और भटकता रहता है। यह ज्योतिषों में अद्भुत ज्योति है जो दूर-दूर तक जा सकता है। यह मेरा मन मङ्गलमय सङ्कल्प वाला हो।

२ जिस के द्वारा कर्मपरायण मनीषी सज्जन यज्ञों में तथा बुद्धिमान् विद्वान् विद्वत्सभाओं में पवित्र कर्मों को विस्तृत करते हैं, जो उत्पन्न हुए प्राणियों के अन्दर अपूर्व और आदरणीय रूप में विराजमान है, वह मेरा मन अच्छे सङ्कल्प वाला हो।

३ जिस में ज्ञान, चिन्तन और धैर्य की विलक्षण शक्ति है, जो प्रजाओं में अमृत ज्योति के रूप में विराजमान है, जिसके बिना कोई भी कर्म नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला हो।

४ जिस अमृत ने भूत, वर्तमान और भविष्यत् को तथा सब संसार को धारण कर रखा है. जो सात स्तुति-पाठकों (पांच ज्ञानेन्द्रियों, अहङ्कार तथा बुद्धि) वाले जीवन रूपी यज्ञ को चला रहा है, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला हो।

५ जिस में, रथ की नाभि में अरों के समान ऋचाएं, यजु और साम प्रतिष्ठित हैं, जिस में प्रजाओं का सब ज्ञान ओत-प्रोत है, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला हो

६ जैसे चतुर सारथि रासों द्वारा घोड़ों को वश में रखता है वैसे ही जो (मन) मनुष्यों को वश में रख कर हांकता रहता है, जो हृदय-स्थान में रहता है, जो कभी जीर्ण नहीं होता और जो वेग में सब से आगे रहता है, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ईशावास्योपनिषद्

१ ओ३म् ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य-स्विद् धनम ।
(यजुर्वेद ४०/१)

२ कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥
(यजुर्वेद, ४०/२)

३ असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः ।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥
(यजुर्वेद, ४०/३)

४ अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥
(यजुर्वेद, ४०/४)

५ तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥
(यजुर्वेद ४०/५)

६ यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥ (यजुर्वेद ४०/६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ईशावास्योपनिषद्

१ इस समस्त ब्रह्माण्ड में जो भी जड़चेतनात्मक जगत् है वह सब ईश्वर से बसाया हुआ और ईश्वर से व्याप्त है। इस लिए त्याग भाव रखते हुए इस का उपयोग करो। किसी दूसरे के धन की आकांक्षा मत करो। (अथवा लालच में मत पड़ो। यह धन किस का है। अर्थात् किसी का भी नहीं।)

२ ईशावास्य इस संसार में कर्म (निष्काम कर्म) करते हुए मनुष्य सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करे। इस प्रकार तुझ में (मनुष्य में) कर्म का लेप नहीं होता। इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं (कर्म बन्धन से मुक्ति पाने का)।

३ जो लोग आत्महनन करते हैं (हिंसा, असत्य, स्तेय, अब्रह्मचर्य, परिग्रह आदि द्वारा आत्महनन के मार्ग पर चलते हैं) वे मर कर गहन अन्धकार से आवृत असुर्य (आसुर भाव से युक्त) नामक लोकों में जाते हैं (आसुरी योनियों मे जन्म लेते हैं।

४ इन्द्रादि देवता अथवा दिव्य गुण युक्त इन्द्रियाँ भी उसे नहीं पा सकतीं, क्योंकि वह उनसे भी पहले विद्यमान है। वह स्वयं स्थित रहते हुए भी दूसरे दौड़ने वालों से आगे निकल जाता है। उस में ही वायु जल को धारण करता है।

५ वह (ईश्वर) चलता है, वह नहीं चलता, वह दूर है, वह निकट भी है; वह इस सब के अन्दर है, वही इस सब चे बाहर विद्यमान है।

६ जो व्यक्ति सब प्राणियों को आत्मा (जीवात्मा तथा परमात्मा) में देखता है और आत्मा को (अपने आप को तथा परमात्मा को) सब प्राणियों है देखता है, वह पाप नहीं करता, किसी से घृणा नहीं करता।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

७ यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ।। (यजुर्वेद ४०/७)

८ स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रण-
मस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतो-
ऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।। (यजुर्वेद ४०/८)

९ अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाँ रताः ।। *(यजुर्वेद ४०/९)

१० अन्यदेवाहुर्विद्ययान्यदाहुरविद्यया
इति शुश्रुम धीराणाँ ये नस्तद् विचचक्षिरे ।। (यजुर्वेद ४०/१०)

११ विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ।। (यजुर्वेम ४०/११)

---

* यहां विद्या और अविद्या शब्दों के विद्वानों ने भिन्न-भिन्न अर्थ किये हैं। स्वामी शङ्कराचार्य के अनुसार विद्या का अर्थ कर्म है और अविद्या का देवता ज्ञान (कोरी उपासना)। श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति ने विद्या का अर्थ 'केवल ज्ञान' किया है और अविद्या का केवल कर्म'। श्री दीवानचन्द ने विद्या का आशय 'अन्तिम सत्ता का दर्शन' समझा है और अविद्या का 'साधारण साधनों से प्राप्त होने वाला अनुभूत ज्ञान।'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

७ जिस जानने वाले (परब्रह्म परमेश्वर की सर्वत्र अनुभूति पाने वाले) के ज्ञान में सब भूत (प्राणी) आत्मवत् हो गये हों और जो भूतों के अनेकत्व में एकत्व को देखता हो उसके लिए मोह कैसा ? और शोक कैसा ?

८ वह (तत्त्वज्ञ) परम तेजोमय, शरीर से रहित, व्रण (छिद्र अथवा घाव) से रहित, नाड़ी-संस्थान से रहित, शुद्ध और पाप रहित ईश्वर को पा लेता हैं। परमात्मा कवि (क्रान्तदर्शी, विश्व रूपी काव्य को रचने वाला), मनीषी (सर्वज्ञ, ज्ञान स्वरूप) परिभू (सर्वत्र व्याप्त) और स्वयम्भू (स्वयं स्वेच्छा से सत्ता धारण करने वाला) है। वह अनादि काल से भली प्रकार सम्पूर्ण पदार्थों को रचता चला आ रहा है।

९ जो अविद्या की उपासना करते हैं वे गहन अन्धकार में प्रवेश करते हैं ! जो विद्या में रत हैं वे उस से भी अधिक गहरे अन्धकार में प्रवेश करते हैं।

१० विद्या से अन्य फल मिलता है और अविद्या से अन्य फल मिलता है। ऐसा धीर पुरुषों से हमने सुना है, जिन्होंने इसकी व्याख्या की थी।

११ जो विद्या और अविद्या दौनों को साथ साथ जान लेता है वह अविद्या से मृत्यु को पार कर विद्या से अमृत को प्राप्त करता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१२ अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः ॥ (यजुर्वेद ४०/१२)

१३ अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥ (यजुर्वेद ४०/१३)

१४ सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयं सह ।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥ (यजुर्वेद ४०/१४)

१५ हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥ (यजुर्वेद ४०/१५)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१२ जो असम्भूति की उपासना करते हैं, वे गहन अन्धकार में प्रवेश करते है और जो सम्भूति में ही रत रहते हैं वे उस से भी अधिक गहन अन्धकार में प्रवेश करते हैं। †

१३ सम्भूति का फल कुछ और बताया गया है और असम्भूति का फल कुछ और कहा गया है। ऐसा हमने धीर पुरुषों से सुना है जिन्होंने इसकी व्याख्या की है।

१४ जो सम्भूति और असम्भूति इन दोनों को एक साथ जानते हैं वे विनाश से मृत्यु को पार कर के सम्भूति से अमृत को भोगते हैं।

१५ हिरण्मय (स्वर्णिम चमकदमक वाले) पात्र से सत्य का मुख ढका हुआ है। हे पूषन् देव ! (सब का भरण-पोषण करने वाले परमेश्वर !) सत्य धर्म को देखने के लिए तू उस ढकने को (पर्दे को) हटा दे ताकि हम उसे देख सकें।

---

† श्री शङ्कराचार्य के अनुसार सम्भूति का अर्थ 'कार्यब्रह्म और असम्भूति का 'अव्यक्त प्रकृति' (अव्याकृतरूपा प्रकृतिः)। श्री अरविन्द घोष ने सम्भूति का अर्थ 'जन्म किया है और असम्भूति का 'जन्म का अभाव'। श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति के अनुसार सम्भूति का अर्थ है 'नित्य पदार्थों की उपासना' और असम्भूति का 'अनित्य पदार्थों की उपासना'। श्री दीवानचन्द के अनुसार सम्भूति का अर्थ 'आत्मनिर्माण,भावात्मक शुद्धि' है और असम्भूति का 'असत्य स्वार्थमय स्वत्व का विनाश, अनृत का खण्डन'। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार सम्भूति से अभिप्राय है 'असद्वृत्तियों का निरोध', अथवा 'समष्टिवाद', अथवा 'कार्यप्रकृति' आदि और असम्भूति का अर्थ है 'सद्वृत्तियों का विकास, अथवा व्यक्तिवाद', अथवा 'कारण प्रकृति' आदि।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१६ पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजा–
पत्य व्यूह रश्मीन् समूह ।
तेजो यत् ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ।। (यजुर्वेद ४०/१६)

१७ वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर कृतं स्मर क्रतो स्मर कृतं स्मर ।।
(यजुर्वेद ४०/१७)

१८ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो यूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ।।
(यजुर्वेद ४०/१८)

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१६ हे पूषन् ! (भरण पोषण करने वाले ईश्वर !) एकर्षे ! (अद्वितीय ऋषि !), यम ! (सब के नियन्ता) सूर्य ! (सब के प्रेरक प्रकाश !) प्राजापत्य ! (प्रजाओं के पति, अधिष्ठाता !) आप अपनी (ज्ञान-ज्योति की) किरणों को सर्वत्र फैला दो, आप उन किरणों को अपने तेज में समेट लो। आप का जो तेजोमय और कल्याणमय रूप हैं उसे मैं देखता हूं। वह जो परम पुरुष (परमात्मा) है, वह ही मैं भी हूं अर्थात् मैं भी ज्योतिमय पुरुष (जीवात्मा) हूं।

१७ प्राण-वायु (मृत्यु के समय) अमर वायु में (समष्टि वायुतत्त्व में) विलीन हो जाता हैं। वह अमर है। यह शरीर भस्मान्त है अर्थात् तभी तक है जब तक अग्नि में जलकर भस्म नहीं हो जाता। हे कर्म को करने वाले जीव ! ईश्वर को स्मरण कर, आगे किये जाने वाले कर्म को स्मरण कर, पीछे किये हुए कर्म को स्मरण कर। हे कर्म करने वाले जीव, ईश्वर को स्मरण कर और अपने कर्म को स्मरण कर।

१८ हे अग्नि देव ! (ज्ञान स्वरूप प्रकाशमय भगवान् !) तुम हमें ऐश्वर्य और उन्नति के लिए शुभ मार्ग से ले चलो आप सब कर्मों को जानने वाले हैं। आप कुटिलतापूर्ण और शुभ मार्ग के प्रतिबन्धक पाप को हम से पृथक् कर दो (दूर कर दो)। हम बार बार आप को नमस्कार करते हैं।

—:—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपनिषत्-स्मरण

१ ओ३म् असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय।

२ सत्यं वद, धर्मं चर। स्वाध्यान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम् कुशलान्न प्रमदितव्यम्। स्वाध्याय-प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। (तैत्तिरीय उपनिषद्, १/११)

३ मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव! यान्यनवद्यानि कर्माणि, तानि सेवितव्यानि, नो इतराणि। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। सविदा देयम्। (तैत्तिरीय उपनिषद्, १/११)

४ ओ३म् सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।

(तैत्तिरीयोपषिनद् २/१)

५ सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपांसि सर्वाणि च यद् वदन्ति,
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत् ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येत्॥ (कठोपनिषद् १/२/१५)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपनिषत्-स्मरण

१ हे ईश्वर ! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चल; अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चल, मृत्यु से अमरता की ओर ले चल।

२ सत्य बोलो ! धर्माचरण करो ! स्वाध्याय से प्रमाद मत करो। आचार्य के लिए प्रिय (वांछित) धन लाकर सन्तान-परम्परा को मत काटो (उसे आगे बढ़ाओ)। सत्य-कथन से प्रमाद नहीं करना चाहिए। धर्माचरण से प्रमाद नहीं करना चाहिए। कुशल (शुभ कर्मों) से प्रमाद नहीं करना चाहिए। भूति (ऐश्वर्य उन्नति) से प्रमाद नहीं करना चाहिये। स्वाध्याय और प्रवचन (वेदों के अध्ययन और अध्यापन) से प्रमाद नहीं करना चाहिये। देव-कार्य (सन्ध्या, अग्निहोत्र आदि) और पितृकार्य (माता-पिता और पूर्वजों की सेवा आदि से प्रमाद नहीं करना चाहिये।

३ माता को देवता समझो। पिता को देवता समझो। आचार्य को देवता समझो। अतिथि को देवता मानों। जो निर्दोष और अनिन्द्य कर्म हैं, तुम्हें वही करने चाहियें, दूसरे नहीं। श्रद्धा-पूर्वक दान देना चाहिए। बिना श्रद्धा के भी देना चाहिये। अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार देना चाहिये। लोक लाज से देना चाहिए। भय से भी देना चाहिए। विवेक-पूर्वक देना चाहिए।

४ हे ईश्वर ! हम दोनों (गुरु और शिष्य) की एक साथ ही रक्षा करो। हम दोनों का एक साथ ही पालन करो। हम दोनों एक साथ ही अपनी शक्ति को बढ़ाएं। हमारी पढ़ी हुई विद्या तेज युक्त हो। हम आपस में कभी द्वेष न करें।

५ सारे वेद जिस पद का बार बार प्रतिपादन करते करते हैं, सब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६ नित्योऽनित्यानाँ चेतनश्चेनाना-
मेको बहूनां यो विदधाति कामान् ।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा-
स्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् । (कठोपनिषद् २/५/१३)

७ ब्रह्म वेदममृतं पुरस्ताद्
ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण ।
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्म-
वेद विश्वमिदं वरिष्ठम् ॥ (मुण्डकोपनिषद् २/२/११)

८ सत्यमेव जयते नानृतं
सत्येन पन्था विततो देवयानः ।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा
यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम् । (मुण्डकोपनिषद् ३/१/६)

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तप जिस की घोषणा करते हैं, जिस को चाहते हुए (मुमुक्षु साधक) ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वह पद (शब्द) मैं तुम्हें संक्षेप में बताता हूं। वह पद है 'ओ३म्'।

६ जो अनित्य पदार्थों में एक मात्र नित्य है, जो चेतनों का भी चेतन है, जो अनेकों में एक होकर विद्यमान है, जो समस्त कामनाओं को रचता है, उस पर ब्रह्म परमात्मा को जो धीर व्यक्ति अपने में (अपनी आत्मा के अन्दर) स्थित देखते हैं उन्हीं को चिरस्थायी शान्ति प्राप्त होती है, दूसरों को नहीं।

७ यह अमृत ब्रह्म ही सामने है, ब्रह्म ही पीछे है, ब्रह्म ही दक्षिण और उत्तर में है, ब्रह्म ही ऊपर और नीचे भी फैला हुआ है, यह सम्पूर्ण विश्व ब्रह्म ही है और वह सर्वश्रेष्ठ है।

८ सदैव सत्य की जय होती है, झूठ की नहीं। देवयान मार्ग (देव की ओर ले जाने वाला मार्ग सत्य से ही बना है जिस से आप्त काम (पूर्ण काम, कृतार्थ) ऋषि उस स्थान पर पहुँचते हैं जो उस सत्य पर ब्रह्म परमात्मा का परम धाम है।

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गीता-सार
(गीता-श्लोक-संग्रह)

१ त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य पर निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥
(११/१८)

२ अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहु शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥
(११/१९)

३ द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः ।
दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥
(११/२०)

४ त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥
(११/३८)

५ वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वा पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥
(११/३९)

६ नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥
(११/४०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गीता सार
(गीता-श्लोक-संग्रह)

१ हे परम पिता परमात्मा ! आप ही परम ज्ञेय (जानने योग्य) हैं, अविनाशी ब्रह्म हैं। आप ही इस सम्पूर्ण जगत् के परम आधार हैं। आप अविनाशी हैं तथा शाश्वत धर्म के रक्षक है। मैं आप को ही सनातन पुरुष मानता हूं।

२ हे ईश्वर ! मैं आपको आदि, मध्य और अन्त से रहित देखता हूं। आप की अनन्त शक्ति है और अनन्त भुजाएं हैं। सूर्य और चन्द्र आप के नेत्र हैं। धधकती हुई अग्नि आप का मुख है। आप अपने तेज से इस सम्पूर्ण विश्व को तपा रहे हैं।

३ आकाश और पृथिवी के बीच इस अन्तराल में एवं सब दिशाओं में आप अकेले ही व्याप्त हो रहे हैं। हे महात्मन् ! आप के इस उग्र एवं अद्भुत रूप को देखकर तीनों लोक भय से कांप रहे हैं।

४ आप देवताओं में आदि देव हैं, आप पुरातन पुरुष हैं, आप इस विश्व के परम आधार हैं। आप ही ज्ञाता और ज्ञेय हैं तथा परम धाम हैं। हे अनन्तरूप ईश्वर ! इस सारे विश्व का विस्तार आप ने ही फैलाया हुआ है।

५ हे ईश्वर ! आप ही वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्र, प्रजापति तथा प्रपितामह (परदादा) हैं। आप को हजार बार नमस्कार है, पुनः पुनः नमस्कार हैं।

६ हे सर्व अर्थात् सर्वव्यापक ईश्वर ! आप को सामने से नमस्कार है, पीछे से नमस्कार हैं, सब ओर से नमस्कार है। आप की शक्ति अनन्त है, आप का बल अपार है। आप सर्वव्यापक अर्थात् सर्वत्र व्याप्त हो इसी लिए आप सर्व (सब कुछ) हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

७ पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभावः ।।
(११/४३)

८ तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ।।
(११/४४)

(२) ईश्वर-महिमा

१ सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ।। (१३/१३)

२ सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ।। (१३/१४)

३ बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् । (१३/१५)

४ अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ।। (१३/१६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

७ आप इस चराचर जगत् के पिता है; इस संसार के परम पूज्य हैं और गुरुओं के भी गुरु है। जब आप के समान ही कोई नहीं है तो आप से अधिक कोई हो ही कैसे सकता है ? तीनों लोकों में आप अप्रतिम प्रभाव वाले हैं।

८ इस लिए मैं अपने शरीर को आपके सम्मुख साष्टाङ्ग झुकाकर आप को प्रणाम करके आप आराधनीय प्रभु को प्रसन्न होने की प्रार्थना करता हूं। हे देव, जैसे पिता अपने पुत्र के, मित्र अपने मित्र के व्यवहार को सहन करता है, वैसे ही आप मेरे प्रिय के लिए अर्थात् मेरे कल्याण के लिए मेरे व्यवहार को सहन करें।

(२) ईश्वर-महिमा

१ सर्वत्र उस ईश्वर के हाथ-पाँव हैं; सर्वत्र उसकी आंखें, सिर और मुख हैं; सर्वत्र उसके कान हैं; वह समस्त विश्व को आवृत करके ठहरा हुआ हैं।

२ वह सब इन्द्रियों से रहित है, परन्तु उसमें सभी इन्द्रियों के गुणों का आभास विद्यमान हैं। वह अनासक्त हैं, परन्तु सब का भरण-पोषण करने वाला हैं। वह स्वयं प्रकृति के सत्त्व, रज और तम गुणों से रहित है, परन्तु फिर भी प्रकृति के गुणों को भोगने वाला है।

३ वह भूतों के बाहर है तथा अन्दर भी है; वह अचर (स्थिर) भी है और चर (अस्थिर) भी। सूक्ष्म होने के कारण वह अविज्ञेय है; वह दूर भी है और पास भी हैं।

४ वह स्वयं अविभक्त होते हुए भी सब भूतों में विभक्त हो कर स्थित है। उसी को सब प्राणियों का भरण करने वाला समझना चाहिये। वही संहार करने वाला है और वही उत्पन्न करने वाला है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

५ ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं च हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥ (१३/१७)

६ समं सवषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥ (१३/२७)

७ अनादित्वान्निर्गुणत्वात् परमात्माऽयमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते ॥ (१३/३१)

८ ईश्वर : सर्वभूतानाँ हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥ (१८/६१)

९ तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ (१८/६२)

(३) आत्मा की अमरता

१ देहिनोऽस्मिं यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ (२/१३)

२ अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥ (२/१७)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

५ वह ज्योतियों की भी ज्योति है। उसे अन्धकार से भी परे कहा जाता है। वही ज्ञान है, वही ज्ञेय है और वही ज्ञानगम्य है। वह सब के हृदय में विशेष रूप से स्थित है।

६ जो परमेश्वर को सभी भूतों में समान रूप से देखता है, जो समझता है कि वही परमेश्वर सभी नष्ट होने वाले पदार्थों में अविनाशी रूप से विद्यमान है, वही यथार्थ में देखता है।

७ हे कौन्तेय ! वह अविनाशी परमात्मा अनादि और निर्गुण होने के कारण शरीर में (सभी शरीरों में) रहता हुआ भी न कुछ कर्म करता है और न ही (शरीर के) कर्मों से लिप्त होता है।

८ हे अर्जुन ! ईश्वर सब प्राणियों के हृदय-प्रदेश में बैठा हुआ है। वह अपनी माया से सब प्राणियों को इस प्रकार घुमा रहा है जैसे मानो वे किसी यन्त्र पर चढ़े हुए हों।

९ हे भारत ! तू सर्वभाव से अर्थात् सर्वात्मना उसी की शरण में जा। उसी की कृपा से तुझे परम शान्ति और शाश्वत स्थान प्राप्त होगा।

(३) आत्मा की अमरता

१ शरीर धारण करने वाले आत्मा (जीवात्मा) को जैसे इस शरीर में बचपन, यौवन और बुढ़ापा प्राप्त होता है वैसे ही दूसरे शरीर की प्राप्ति भी हो जाती है। धीर पुरुष इस विषय में मोह को नहीं प्राप्त होता है।

२ जो आत्म सत्ता हमारे इस सारे शरीर में व्याप्त है, वह अविनाशी (नाश रहित) है। उस अविनाशी आत्म सत्ता का कोई भी नाश नहीं कर सकता।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३ अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद् युध्यस्व भारत ॥ (२/१८)

४ य एवं वेत्ति हन्तारं यश्चनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतौ नायं हन्ति न हन्यते ॥ (२/१९)

५ न जायते म्रियते ना कदाचन् नायं भूत्वा भविता न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽय पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥
(२/२०)

६ वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥
(२/२२)

७ नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ (२/२३)

८ अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥ (२/२४)

९ अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥ (२/२५)

१० यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथाऽऽत्मा नोपलिप्यते ॥ (१३/३२)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३ नित्य स्वरूप आत्मा (शरीरी) के ये शरीर अन्त वाले अर्थात् नश्वर कहे गए हैं। आत्मा अविनाशी तथा अप्रमेय (अज्ञेय) है। इसलिए हे अर्जुन ! तू युद्ध कर।

४ जो इस आत्मा को मारने वाला समझता है और जो इसे मरा हुआ समझता है, वे दोनों ही ठीक नहीं जानते। यह आत्मा न तो मारता है और न ही मारा जाता है।

५ यह आत्मा न कभी उत्पन्न होता है और न ही कभी मरता है। ऐसी बात भी नहीं है कि एक बार होने अर्थात् अस्तित्व में आने पर फिर दोबारा नहीं होता। यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत (परिवर्तन रहित) और पुरातन है। शरीर का वध हो जाने पर भी यह नहीं मरता है।

६ जैसे मनुष्य फटे पुराने वस्त्रों को छोड़ कर दूसरे नये वस्त्र पहन लेता है वैसे ही देही (जीवात्मा) पुराने और जीर्ण-शीर्ण शरीरों को छोड़ कर नये शरीरों को प्राप्त करता है (धारण कर लेता है)।

७ इस आत्मा को शस्त्र नहीं छेद सकते, न इस को आग ही जला सकती है। न ही इसे जल गीला कर सकता है और न ही पवन सुखा सकती है।

८ यह आत्मा छेदा नहीं जा सकता, जलाया नहीं जा सकता, गीला नहीं किया जा सकता और सुखाया नहीं जा सकता। यह नित्य है, सर्वत्र व्याप्त है, स्थिर है, और सनातन है।

९ यह आत्मा अव्यक्त है (इन्द्रियों से ग्रहण करने का विषय नहीं है); यह अचिन्त्य है (मन से ग्रहण करने का विषय नहीं है); यह अविकार्य (सर्वथा विकार-रहित) कहा जाता है। इसलिए उसे ऐसा जान कर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

१० जिस प्रकार सर्वव्यापी आकाश सूक्ष्मता के कारण किसी भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

११ यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥ (१३/३३)

(४) स्थितप्रज्ञ

१ स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव !
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत् किम् ॥ (२/५४)

२ प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥ (२/५५)

३ दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥ (२/५६)

४ यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ (२/५७)

५ यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ (२/५८)

६ यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥ (२/६०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
पदार्थ से लिप्त नहीं होता, उसी प्रकार शरीर में सर्वत्र स्थित आत्मा भी शरीर के कर्मों से लिप्त नहीं होता।

११ जिस प्रकार एक ही सूर्य इस समस्त संसार को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार हे भारत ! क्षेत्री (क्षेत्र अर्थात् शरीर का स्वामी) सम्पूर्ण क्षेत्र (शरीर) को प्रकाशित करता है।

(४) स्थितप्रज्ञ

१ हे केशव ! समाधि में स्थित स्थितप्रज्ञ व्यक्ति की क्या परिभाषा है ? स्थितप्रज्ञ व्यक्ति को किस प्रकार बोलना चाहिए ? उसे किस प्रकार बैठना चाहिए ? उसे किस प्रकार चलना चाहिए ?

२ हे पार्थ ! जब मनुष्य अपने मन में गतिशील सभी कामनाओं का परित्याग कर देता है और जब वह अपने आप में अपने आप से ही संतुष्ट रहने लगता है तब वह स्थितप्रज्ञ (स्थित बुद्धि वाला) कहलाता है।

३ जिस व्यक्ति का मन दुःखों में उद्विग्न (बेचैन) नहीं होता; सुखों में जिस की स्पृहा मिट जाती है; जो राग, भय और क्रोध से मुक्त हो जाता है; वह स्थितप्रज्ञ मुनि कहलाता है।

४ जो सर्वत्र स्नेह (रागात्मक स्नेह) से रहित होता है; जो शुभ वस्तु को पाकर प्रसन्न नहीं होता और अशुभ वस्तु को पाकर उस से द्वेष नहीं करता; उसकी बुद्धि प्रतिष्ठित अर्थात् स्थिर होती है।

५ जैसे कछुआ अपने अंगों को सब ओर से सिकोड़ कर अपने खोल के अन्दर खींच लेता है, वैसे ही जो पुरुष अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से खींच लेता है (हटा लेता है) उस की बुद्धि प्रतिष्ठित होती है अर्थात् वह स्थिर बुद्धि वाला होता है।

६ हे कौन्तेय ! निश्चय ही यत्न करते हुए विवेकशील पुरुष की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।। (२/६१)

७ रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ।। (२/६४)

८ प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ।। (२/६५)

९ नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ।। (२/६६)

१० इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ।। (२/६७)
तस्माद् यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।। (२/६८)

११ आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ।।
(२/७०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रियाँ भी प्रमाथी (मथ डालने वाली) बन कर मन को बल पूर्वक विषयों की ओर खींच लेती हैं। इस लिए इन सब इन्द्रियों को वश में कर के, युक्त हो कर, ईश्वर–परायण ('मत्पर') बन कर जो व्यक्ति ईश्वर में ही रम जाता है तथा जिस की इन्द्रियाँ उस के वश में होती हैं उस की प्रज्ञा (बुद्धि) स्थिर होती है।

७ राग और द्वेष से रहित तथा अपने वश में की हुई इन्द्रियों से विषयों का उपयोग करता हुआ विधेयात्मा (शिक्षित-आत्मा) व्यक्ति प्रसन्नता को प्राप्त करता है।

८ मन के प्रसन्न होने पर व्यक्ति के सब दुःख दूर हो जाते हैं। निश्चय ही प्रसन्न चित्त वाले व्यक्ति की बुद्धि शीघ्र ही स्थिर हो जाती हैं।

९ अयुक्त पुरुष (ब्रह्म से अयुक्त पुरुष) के पास बुद्धि नहीं होती, न ही अयुक्त पुरुष के पास भावना होती है। भावना-विहीन पुरुष के पास शान्ति नहीं होती और अशान्त व्यक्ति को सुख कहाँ ?

१० जब मन सांसारिक विषयों में आसक्त इन्द्रियों के पीछे लगाया जाता है तो वह मनुष्य की प्रज्ञा (बुद्धि) को हर लेता है, जैसे वायु जल में नाव को बहा ले जाती है। इस लिए हे महाबाहु ! जिस की इन्द्रियाँ इन्द्रियों के विषयों से सब प्रकार से निगृहीत कर ली गई हैं, उस की बुद्धि स्थिर है।

११ चारों ओर से पानी से भरे जाते हुए परन्तु फिर भी अपनी मर्यादा में रहते हुए सागर में जिस प्रकार पानी प्रवेश कर जाता है उसी प्रकार सब कामनाएं जिस में प्रविष्ट हो जाती हैं और फिर भी जिसकी शान्ति भंग नहीं होती, ऐसा व्यक्ति ही सच्ची शान्ति को प्राप्त करता है। कामनाओं की कामना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१२ विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥ (२/७१)

(५) समत्व-दृष्टि

१ विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥ (५/१८)

२ इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥ (५/१९)

३ न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ॥ (५/२०)

४ सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥ (६/९)

५ समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्ठाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥
६ मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥ (१४/२५)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करने वाला अर्थात् इच्छाओं के पीछे भागने वाला शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता।

१२ जो मनुष्य सब कामनाओं (इच्छाओं) को छोड़कर और निःस्पृह (लालसा से रहित), निर्मम (ममता से रहित), तथा निरहंकार (अहंकार से रहित) होकर संसार में विचरता है, वह शान्ति को पाता है।

(५) समत्व-दृष्टि

१ विद्या और विनय से सम्पन्न ब्राह्मण में, गौ में, हाथी में, कुत्ते में तथा श्वपाक (चाण्डाल) में पण्डित लोग भेदबुद्धिरहित समता का भाव रखते हैं।

२ जिन का मन (ज्ञान के द्वारा) साम्यावस्था में स्थिर हो जाता है, उन्होंने इस पृथ्वी पर ही संसार को जीत लिया है, क्योंकि ब्रह्म भी निर्दोष एवं सम है, सब में एक समान है, इसलिए वे साम्य बुद्धि रखने वाले व्यक्ति ब्रह्म में स्थिर रहते हैं।

३ जो व्यक्ति प्रिय वस्तु को प्राप्त करके प्रसन्न नहीं होता और न ही अप्रिय वस्तु को पा कर उद्विग्न होता है; जिसकी बुद्धि स्थिर है; जो मोह में ग्रस्त नहीं होता; वह ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म में स्थित होता है।

४ सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेष करने योग्य, बन्धु, साधु तथा पापी इन सब में जो समबुद्धि रखता है, वह सब से विशेष व्यक्ति होता है।

५,६ जो सुख और दुःख को समान समझता है; जो स्वस्थ (अपने में स्थिर) रहता है; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने को समान समझता है; जिसके लिए प्रिय और अप्रिय तुल्य हैं; जो धीर है; जो निन्दा और स्तुति को एक समान समझता है; जो मान और अपमान में समान रहता है; जो मित्र पक्ष

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(६) कर्मयोग

१ न कमणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च सन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ (३/४)

२ न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकमकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ (३/५)

३ नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।
शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः ॥ (३/८)

४ कमन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः, स उच्यते ॥ (३/६)

५ कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि ॥ (३/२०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा शत्रु पक्ष में समान भाव रखता है; जो सब कामों के आरम्भ में त्याग का भाव रखता है; वह (समत्व बुद्धि रखने वाला) गुणातीत कहलाता है।

(६) कर्मयोग

१ कर्मों का आरम्भ न करने से मनुष्य निष्कर्मता (कर्मशून्यता) को नहीं पाता, और न ही आरम्भ किए हुए कर्म को छोड़ देने सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

२ कोई भी मनुष्य कभी भी बिना कर्म करने के क्षण भर के लिए भी नहीं रह सकता। प्रकृतिजन्य गुण अर्थात् मनुष्य के प्राकृतिक गुण उसे विवश बना देते हैं और उस से कर्म करवाते हैं।

३ तू अपने लिए नियत कर्म को कर (अथवा तू निश्चित रूप से कर्म कर), क्योंकि कर्म करना कर्म न करने की अपेक्षा अधिक अच्छा है। बिना कर्म करने के तो तुम्हारी शरीर यात्रा भी सिद्ध नहीं होगी (नहीं चल सकेगी)।

४ जो व्यक्ति कर्मेन्द्रियों को रोक कर मन से उन (रोकी हुई) कर्मेन्द्रियों के विषयों का स्मरण करता हुआ रहता है अर्थात् जो इन्द्रियों का संयम करने से समझता है कि वह कर्म से बच जायेगा, परन्तु मन से विषयों का स्मरण करता रहता हैं, वह मिथ्याचारी है अर्थात् उस का आचार मिथ्या (भ्रमपूर्ण) है।

५ निस्सन्देह जनक आदि न भी कर्म से ही सिद्धि को प्राप्त किया था। लोकसंग्रह को देखने हुए भी अर्थात् जनसाधारण को संगृहीत (संगठित) रखने के उद्देश्य से भी तुम्हें कर्म करना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥ (२/४७)

(७) निष्काम कर्म

१ यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥ (३/९)

२ तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥ (३/१९)

३ प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥ (३/२७)

४ तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।
गुणा गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सज्जते ॥ (३/२८)

५ इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।
तयोर्न वशमागच्छेत् तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ ॥ (३/३४)

६ श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ (३/३४)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६ तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है। उस के फल की कामना करने में नहीं। तू कर्म के फल का हेतु मत बन, और ना ही तुम्हारी संगति निकम्मा रहने में हो।।

(७) निष्काम कर्म

१ यज्ञ की भावना से किये जाने वाले कर्म से भिन्न कर्म संसार में बन्धन का हेतु हैं। इस लिए हे अर्जुन ! तू यज्ञ की भावना से आसक्तिरहित हो कर कर्म कर।

२ इस लिए निरन्तर अनासक्त (आसक्ति रहित) हो कर कर्तव्य (करने योग्य) धर्म को करता रह। अनासक्त रह कर कर्म करता हुआ पुरुष परम पद को प्राप्त करता है।

३ प्रकृति के गुणों (सत्त्व, रज, तम) द्वारा सब प्रकार से किये जाने वाले कर्मों को अहङ्कार से मूढ़ हुआ व्यक्ति यह समझता है कि मैं (आत्मा) इन कर्मों का करने वाला हूँ।

४ परन्तु हे महाबाहु अर्जुन ! तत्ववित् व्यक्ति (तत्त्व को जानने वाला व्यक्ति) 'गुण' और 'कर्म' के भेद को समझ कर और यह जान कर कि गुण (प्रकृति के सत्त्व, रज और तम नामक तीनों गुण) प्रकृति के गुणों में क्रियाशील हैं, कर्मफल में आसक्त नहीं होता।

५ प्रत्येक इन्द्रिय का जो विषय है उस में राग और द्वेष व्यवस्थित हैं। उन के वश में नहीं होना चाहिये। वे दोनों ही (राग और द्वेष ही) इस (मनुष्य) के महान् शत्रु हैं।

६ दूसरे के अच्छी प्रकार से पालन किये जा रहे धर्म से भी 'स्व धर्म' अर्थात् अपनी प्रकृति अथवा स्वभाव का धर्म, चाहे वह अपूर्ण अथवा गुणरहित ही क्यों न हो, अच्छा होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

७ यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥ (४/१९)

८ त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपिनैव किंचित्करोति सः ॥ (४/२०)

९ निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्विषम् ॥ (४/२१)

१० यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥ (४/२२)

११ गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ (४/२३)

१२ योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय ॥ (४/४१)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
अपने धर्म में मृत्यु भी अच्छी है, परन्तु दूसरे का धर्म (स्वभाव, प्रकृति) भयप्रद होता है।

७ जिसके आरम्भ किए हुए सब काम कामना (फल प्राप्ति की इच्छा) के सङ्कल्प से रहित होते हैं, जिसके कर्म ज्ञान रूपी अग्नि से भस्म हो गये हैं; उसे बुद्धिमान् लोग पण्डित कहते हैं।

८ कर्म के फल के प्रति आसक्ति को त्याग कर, नित्य तृप्त (सतुष्ट) रह कर, किसी पर भी आश्रित न रह कर जो कर्म करता है वह कर्म में लगा होने पर भी कुछ नहीं कर रहा है।

९ आशाओं से रहित (फल की आशाओं से रहित), चित्त और आत्मा को वश में रखते हुए, सब प्रकार के भोग–साधनों के परिग्रह की भावना को छोड़ते हुए और केवल शारीरिक कर्म को ही करते हुए मनुष्य किसी पाप को प्राप्त नहीं करता है।

१० जो व्यक्ति अपने आप जो कुछ मिल जाए उसी में सन्तुष्ट रहता है, जो सुख दुःख आदि द्वन्द्वों से परे है, जो ईर्ष्या से रहित है, जो सफलता और असफलता में सम-भाव से रहता है, वह व्यक्ति कर्म कर के भी कर्म-बन्धन में नहीं पड़ता।

११ कर्मफल के संग से युक्त हुए, ज्ञान में अवस्थित चित्त वाले, यज्ञ के लिए अर्थात् यज्ञ की भावना से आचरण करते हुए व्यक्ति का सम्पूर्ण कर्म विलीन हो जाता है (कर्मबन्धन में डालने का हेतु नहीं बनता)।

१२ हे धनंजय ! जिस ने योग द्वारा सब कर्मों को (कर्म-फल को) त्याग दिया है, जिस ने ज्ञान द्वारा सब सशयों को छिन्न कर दिया है, जिस ने आत्मा पर अधिकार कर लिया है, उस व्यक्ति को (उस के द्वारा किये जाने वाले) कर्म बन्धन में नहीं डालते।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१३ नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित् ।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन् स्वपन्स्वशन् ॥ (५/८)
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् ॥ (५/९

१४ ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संग त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसः ॥ (५/१०)

१५ कायेन मनसा बुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि ।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सगं त्यक्त्वाऽऽत्मशुद्धये ॥ (५/११)

१६ युक्तः कर्मफल त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥ (५/१२)

(८) भक्तियोग

१ क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥ (१२/५)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१३ तत्त्व को जानने वाला योगयुक्त व्यक्ति (कर्मयोगी) देखते हुए सुनते हुए, सूंघते हुए, खाते हुए, चलते हुए, सोते हुए और सांस लेते हुए यही समझे कि मैं कुछ नहीं कर रहा हूं। बोलते हुए, त्यागते हुए, ग्रहण करते हुए, पलकें खोलते और पलकें बन्द करते हुए वह यही समझे कि इन्द्रियां इन्द्रियों के विषयों में बरत रहीं हैं।

१४ जो व्यक्ति आसक्ति को (कर्मों के फल में आसक्ति को) को त्याग कर और कर्म फल को ब्रह्म के अर्पण कर के कर्म करता है वह पाप से वैसे ही लिप्त नहीं होता जैसे कमल का पत्ता पानी से लिप्त नहीं होता।

१५ कर्मयोगी (निष्काम कर्म करने वाले) लोग आसक्ति को त्याग कर आत्म शुद्धि के लिए केवल शरीर, केवल मन, केवल बुद्धि केवल इन्द्रियों से कर्म करते हैं (फल की भावना से नहीं)।

१६ कर्मयोगी कर्मों के फलों की आसक्ति को त्याग कर नैष्ठिक शान्ति अर्थात् परम शान्ति को प्राप्त करता हैं। जो कर्मयोगी नहीं अर्थात् जो कर्म-फल की भावना को त्यागे बिना कर्म करता है, वह कामना से प्रेरित हो कर फल में आसक्त होने के कारण बन्धन में फस जाता है।

(८) भक्तियोग

१ जिन का चित्त अव्यक्त ब्रह्म में आसक्त है, उन्हें अधिक क्लेश उठाना पड़ता है, क्योंकि देहधारी व्यक्त मनुष्यों द्वारा अव्यक्त ब्रह्म को पाने में कठिनाई होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ।। (१२/६)
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ।। (१२/७)

३ मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ।। (१२/८)

४ मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ।। (१२/२)

५ अद्वेष्टा सर्वभूतानाँ मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरंहकारः समदुःखसुखः क्षमी ।। (१२/१३)
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।। (१२/१४)

६ यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ।। (१२/१५)

७ यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काँक्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः ।। (१२/१७)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ हे अर्जुन ! जो लोग अपने सब कर्मों को मुझ में समर्पण कर के और मेरे परायण हो कर अनन्य योग से मेरा ध्यान करते हैं, उन मुझ में लगाए हुए मन वाले व्यक्तियों को मैं शीघ्र ही मृत्यु और संसार रूपी सागर से पार कर देता हूँ।

३ तू अपना मन मुझ में लगा; अपनी बुद्धि को मुझ में प्रविष्ट कर; इसके बाद तू मुझ में निवास करेगा, इस में कोई सन्देह नहीं है।

४ जो भक्त लोग अपने मन को मुझ में स्थिर करके निष्ठापूर्वक परम श्रद्धा के साथ मेरी उपासना करते हैं, वे मेरे सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

५ जो भक्त किसी भी प्राणी से द्वेष नहीं करता, जो सब प्राणियों का मित्र है, जो सब के प्रति दया का भाव रखता है, जो ममता और अहंकार से रहित है, जो सुख और दुःख में समान रहता है, जो क्षमाशील है, जो सदा सन्तोषी है, जो योगयुक्त है और अपने आप को वश में रखता है, जिस का निश्चय दृढ़ है, जिसने अपने मन और बुद्धि को मुझ में अर्पण कर दिया हुआ है, ऐसा मेरा भक्त मुझे बहुत प्रिय है।

६ जिस से लोग उद्विग्न नहीं होते, जो लोक से उद्विग्न नहीं होता (उद्वेग नहीं पाता); जो हर्ष, क्रोध, भय और उद्वेग रहित होता है; वह मुझे प्रिय है।

७ जो न हर्ष करता है, न द्वेष करता है, न दुःख मानता है, न आशाएं रखता है; जिसने शुभ और अशुभ दोनों का परित्याग कर दिया है, ऐसा भक्तिमान् व्यक्ति मुझे अत्यन्त प्रिय होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

८ समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥ (१२/१८)
तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टः येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियो नरः ॥ (१२/१९)

९ मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥ (१८/६५)

१० सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ (१८/६७)

(९) आत्मोद्धार और योगसमाधि

१ उद्धरेदात्मनाऽऽत्मान नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ (६/५)

२ बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ (६/६)

३ जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥ (६/७)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

८ जो शत्रु और मित्र में, मान और अपमान में, शीत और उष्ण में, सुख और दुःख में समता का भाव रखता है; जो आसक्ति से रहित है; जो निन्दा और स्तुति को एक समान समझता है; जो मितभाषी है; जो जो-कुछ भी मिल जाए उसी में संतुष्ट रहता है; जो किसी भी एक निवास स्थान के प्रति मोह नहीं रखता; जिस की बुद्धि स्थिर है; ऐसा भक्तिमान व्यक्ति मेरा प्रिय है।

९ अपना मन मुझ में लगा, मेरा भक्त बन, मेरा ही यजन (यज्ञ) कर और मुझे नमस्कार कर। ऐसा करने से तू मुझ तक पहुंच जायगा। मैं तुझ से सच्ची प्रतिज्ञा करता हूं, क्योंकि तू मेरा प्रिय है।

१० सब धर्मों को छोड़ कर तू केवल मेरी शरण मे आ जा। मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूंगा। तू शोक मत कर।

(९) आत्मोद्धार और योगसमाधि

१ मनुष्य को चाहिए कि वह अपना उद्धार अपने आप ही करे, अपने आप को अवसन्न न बनाए (नीचे न गिराये)। मनुष्य स्वयं ही अपना मित्र है और स्वयं ही अपना शत्रु है।

२ जिस ने अपने आत्मा से अपने आप को अर्थात् अपने मन को जीत लिया है उसका आत्मा उसका मित्र है। जो अनात्मा है अर्थात् जिस ने अपने आप अपने मन को नहीं जीता है वह अपने ही साथ शत्रु का सा व्यवहार करता है।

३ जिस ने अपनी आत्मा अर्थात् मन को जीत लिया है, जो पूर्ण रूप से शान्त है, उस का 'परम आत्मा' सर्दी और गर्मी में, सुख और दुःख में तथा मान और अपमान में एक समान रहता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

४ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्ठाश्मकाञ्चनः ।। (६/८)

५ योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ।। (६/१०)

६ शुचौ देशे प्रतिष्टाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ।। (१६/११)
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद् योगमात्मविशुद्धये ।। (६/१२)

७ समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ।। (६/१३)
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चितो युक्त आसीत मत्परः ।। (६.१४)

८ युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ।। (६.१५)

९ नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।
व चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ।। (६.१६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

४ जिसका आत्मा (अन्त: करण) ज्ञान और विज्ञान से तृप्त है, जो कूटस्थ (अपरिवर्तन शील) है, जिस ने अपनी इन्द्रियों को जीत लिया है, जिसके लिए मिट्टी का ढेला, पत्थर और सुवर्ण एक समान है, ऐसे कर्मयोगी को 'युक्त' (भगवान के साथ युक्त) कहा जाता है।

५ योगी को एकान्त में स्थित हो कर, अपने चित्त और आत्मा को वश में रख कर, वासना से रहित होकर और संचय की भावना को छोड़कर निरन्तर अपने आप को (अपने मन को) परमात्मा के साथ जोड़ना चाहिए।

६ शुद्ध स्थान पर जो न तो अधिक ऊंचा हो और न ही अधिक नीचा, अपना स्थिर आसन बिछा कर, पहले उस पर कुशा, फिर मृगशाला और फिर वस्त्र बिछा कर बैठे। इस प्रकार वहां बैठा कर, मन को एकाग्र कर, चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को रोककर आत्मशुद्धि के लिए मन को योग में (योग समाधि में) लगा दे।

७ काया, शरीर और गर्दन को एक सीध में अचल (बिना हिले डुले) रख कर स्थिर बैठे, नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि को जमाए तथा इधर उधर न देखे। प्रशान्त मन, भय से रहित, ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित, मन को संयम में करके मुझ में अपने चित्त को लगा कर मेरे परायण होकर बैठे।

८ इस प्रकार सदा अपने आप को ईश्वर में युक्त करता हुआ, अपने मन को वश में रखता हुआ योगी मुझ में स्थित परम निर्वाण देने वाली शक्ति को प्राप्त कर लेता है।

९ हे अर्जुन ! अधिक खाने वाले को योग प्राप्त नहीं होता अर न ही बिल्कुल न खाने वाले को प्राप्त होता है। वह अ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१० युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥ (६/१७)

११ सङ्कल्पप्रभवान् कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥ (६/२४)
शनैः शनैरुपरमेद बुद्धया धृतिगृहीतया ।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥ (६/२५)

१२ यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥ (६/२६)

१३ प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ (६/२७)

१४ युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥ (६/२८)

(१०) दैवी और आसुरी सम्पत्

१ अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ (१६/१)
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ (१६/२)
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ (१६/३)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सोने वाले को भी प्राप्त नहीं होता और अधिक जागने वाले को भी नहीं।

१० जिसका आहार विहार नियमित है, जिसकी चेष्टाएं नियमित हैं, जिसका सोना और जागना नियमित है, ऐसे व्यक्ति के लिए योग दुःखों को दूर करने वाला होता है।

११ संङ्कल्प से उत्पन्न होने वाली सभी कामनाओं को पूर्णतया त्याग कर, मन के द्वारा सब इन्द्रियों को सब ओर से नियम में लाकर (वश में करके) धैर्ययुक्त बुद्धि से धीरे धीरे शान्त होता जाय और मन को आत्मा में स्थित करके और किसी भी वस्तु का चिन्तन न करे।

१२ यह चचल और अस्थिर मन जहां जहां से भागे वहां वहां से इसका नियमन करके (वश में करके) इसे अपने वश में लाये।

१३ इस प्रकार के प्रशान्त मन वाले, राजसिक विकारों से रहित निष्पाप और ब्रह्मभूत योगी (ईश्वर से युक्त, आत्मलीन) को उत्तम सुख प्राप्त होता है।

१४ इस प्रकार वह योगी जिसके सब पाप दूर हो गये हैं, आत्मा को (अपने आप को) सदा ध्यान-योग द्वारा आत्मा (परमात्मा) से युक्त करता हुआ सुखपूर्वक ब्रह्म-प्राप्ति से प्राप्त होने वाले आत्यन्तिक सुख को अनुभव करता है।

दैवी और आसुरी सम्पत्

१ हे भारत! निर्भयता, अन्तःकरण की शुद्धि, ज्ञान और योग में निष्ठा, दान, दम (इन्द्रियों का दमन), यज्ञ, स्वाध्याय, तप, सरलता, अहिंसा, सत्य, क्रोध न करना, त्याग, शान्ति, दूसरों के दोष न ढूंढना, दया, अलोलुपता (लोभ न होना), कोमलता,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञान चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ।। (१६/४)

३ दैवी सम्पद् विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता । (१६/५)

४ आसुरीं योनिमापन्ना मूढ़ा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ।। (१६/२०)

५ त्रिविधं नरस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत् ।। (१६/२१)

६ एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ।। (१६/२२)

(११) त्रिगुणात्मक वर्गीकरण

(क) श्रद्धा

१ त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनाँ सा स्वभावजा ।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ।। (१७/२)

२ सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत !
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लज्जाशीलता अचञ्चलता, तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, द्रोह न करना, अधिक अभिमान न करना—ये सब गुण उस व्यक्ति में होते हैं जो दैवी सम्पत् को लेकर जन्म लेता है।

२ दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोरता, अज्ञान—ये सब उस व्यक्ति के दुर्गुण हैं जो आसुरी सम्पत् लेकर जन्म लेता है।

३ दैवी सम्पद् मोक्ष देने वाली होती है और आसुरी सम्पद् बन्धन में डालने वाली है।

४ हे कौन्तेय, जन्म जन्म में आसुरी योनि में पड़े हुए मूढ़ प्राणी मुझे (ईश्वर को) न पाकर अधम गति को प्राप्त होते हैं।

५ काम, क्रोध और लोभ ये तीन नरक के द्वार हैं जो आत्मा को नाश की ओर ले जाते हैं। इसलिए इन तीनों को छोड़ देना चाहिये।

६ हे कौन्तेय! नरक की ओर ले जाने वाले इन तीन द्वारों काम, क्रोध और लोभ से जो मुक्त हो जाता है वह आत्मा का कल्याण करने वाले कर्मों का आचरण करता है और फलस्वरूप परम गति को प्राप्त करता है।

(११) त्रिगुणात्मक वर्गीकरण

(क) श्रद्धा

१ प्राणियों की श्रद्धा तीन प्रकार की होती है और वह स्वाभाविक (स्वभाव के अनुसार) होती है—सात्त्विकी श्रद्धा, राजसी श्रद्धा और तामसी श्रद्धा। अब उनके विषय में सुनो।

२ हे भारत! सब लोगों की श्रद्धा अपने अपने स्वभाव के अनुसार होती है। मनुष्य स्वभाव से ही श्रद्धामय (श्रद्धा से युक्त) है जिसकी जैसी श्रद्धा होती है वह वैसा ही होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३ यजन्ते सात्त्विका देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः ।
प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ।। (१७/४)

(ख) आहार

४ आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः । (१७/७)

५ आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः ।।(१७/८)

६ कट्वम्ललवणा त्युष्ण तीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ।। (१७/९)

७ यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ।। (१७/१०)

(ग) यज्ञ

८ अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्विकः ।। (१७/११)

९ अभिसंधाय तु फल दम्भार्थमपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ।। (१७/१२)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३ सात्विक स्वभाव वाले व्यक्ति देवताओं की पूजा करते हैं; राजसिक स्वभाव वाले यक्षों और राक्षसों की पूजा करते है; तामसिक स्वभाव वाले भूतो-प्रेतों की पूजा करते हैं।

(ख) आहार

४ सब का प्रिय आहार भी तीन प्रकार का ही होता है।

५ जो आहार आयु, सत्त्व (बुद्धि, अन्तःकरण), बल, आरोग्य (नीरोगता) सुख, प्रसन्नता को बढ़ाने वाले होते हैं; जो रसीले स्निग्ध (चिकने), स्थिर और रुचिकर होते हैं, वे आहार सात्त्विक वृत्ति वाले मनुष्यों के प्रिय होते हैं।

६ जो भोजन कटु (कड़वे), खट्टे, नमकीन, बहुत गर्म, तीखे, रूखे और जलन उत्पन्न करने वाले होते हैं, जो दुःख शोक और रोग को उत्पन्न करने वाले होते हैं, वे राजसिक वृत्ति वालों के प्रिय होते हैं।

७ जो भोजन बहुत देर का बना हुआ हो, नीरस हो, सड़ा हुआ हो, बासी हो, जूठा और अपवित्र हो, वह तामस वृत्ति वाले लोगों को प्रिय होता है।

(ग) यज्ञ

८ जो यज्ञ फल की इच्छा से रहित मनुष्यों द्वारा यह समझ कर किया जाता है कि यह यज्ञ करना हमारा कर्तव्य है, जो शास्त्र-विधि के अनुसार और मन को समाधान करके (एकाग्र कर के) किया जाता है, वह (यज्ञ) सात्त्विक होता है।

९ हे भरत-श्रेष्ठ अर्जुन ! जो यज्ञ किसी फल को लक्ष्य में रख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१० विधिहीनमसृष्टानं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञ तामसं परिचक्षते । (१७/१३)

(घ) तप

११ श्रद्धा परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।
अफलाकांक्षिभिर्युक्तैः सात्त्विक परिचक्षते ॥ (१७ १७)

१२ सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् ।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् ॥ (१६/१७)

१३ मूढग्राहेणात्मनो यत्पीड़या क्रियते तपः ।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥ (१७/१९)

[ङ] दान

१४ दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥ (१७/२०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर अथवा दम्भ (दिखावा) के लिए किया जाता है, उसे राजस यज्ञ जानो।

१० जो यज्ञ विधि से हीन है, जिस में अन्न-दान नहीं किया जाता, जो मन्त्र–पाठ से रहित है, जो दक्षिणा से रहित है तथा श्रद्धा से शून्य है, उस यज्ञ को तामस यज्ञ कहते हैं।

(घ) तप

११ मनुष्य द्वारा फल की इच्छा से रहित होकर परम श्रद्धा पूर्वक जो तीनों प्रकार का तप (शरीरिक, वाचिक और मानसिक) किया जाता है उसे सात्त्विक तप कहते हैं।

१२ जो तप (शारीरिक, वाचिक और मानसिक) सत्कार, मान और पूजा को प्राप्त करने के लिए अथवा दम्भ (दिखावे, पाखण्ड और प्रदर्शन) के लिए किया जाता है, वह राजस तप होता है। वह अस्थिर होता है और चिरकाल तक नहीं रहता।

१३ जो तप (कायिक, वाचिक और मानसिक) मूर्खतापूर्ण दुराग्रह के साथ अपने आप को पीड़ा दे कर और दूसरों को हानि पहुंचाने लिए किया जाता है वह तामस तप कहा गया है।

(ङ) दान

१४ "यह देने योग्य है" ऐसा समझ कर जो दान अनुपकारी व्यक्ति (उपकार न करने वाले व्यक्ति) को दिया जाता है, जिस में देश, काल और पात्र (अधिकारी) को ही ध्यान में रखा जाता है, उस दान को सात्त्विक दान माना गया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१५ यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥ (१७/२१)

१६ अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ (१७/२२)

(च) त्याग

१७ कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन !
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः । (१८/९)

१८ दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात् त्यजेत् ।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत ॥ (१८/८)

१९ नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥ (१८/८)

(छ) ज्ञान

२० सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥ (१८/२०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१५ जो दान किसी उपकार के बदले में प्रत्युपकार की भावना में अथवा किसी फल के उद्देश्य से दिया जाता है, और जिस को देने में (देने वाले को) क्लेश होता है, उस दान को राजस (राजसिक) दान माना गया है।

१६ जो दान देश और काल का विचार किये बिना अपात्रों (दान के अनधिकारियों) को दिया जाता है अथवा जो दान बिना सत्कार के और अवज्ञापूर्वक (निरादरपूर्वक) दिया जाता है, वह दान तामस कहा गया है।

(च) त्याग

१७ हे अर्जुन ! जो नियत कर्म कर्तव्य समझ कर (करना चाहिये ऐसा समझ कर) तथा आसक्ति और फल को छोड़ कर किया जाता है, वह सात्त्विक त्याग माना गया है।

१८ जो व्यक्ति नियत कर्म को (कर्तव्य कर्म को) शारीरिक क्लेश के भय से 'दु ख' समझ कर छोड़ देता है वह राजस त्याग करता है और उसे त्याग का फल नहीं मिलता।

१९ नियत (निश्चित) कर्म का त्याग उचित नहीं है। मोहवश (अज्ञान वश) उस का जो त्याग किया जाता है वह तामस कहलाता है।

(छ) ज्ञान

२० जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य सब भूतों (जड़-चेतनों में) एक ही अविनाशी सत्ता को देखता है, विभक्तों में अविभक्त को देखता है, उस ज्ञान को सात्त्विक समझो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१२ पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञान विद्धि राजसम् ॥ (१८/२१)

२२ यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन् कार्ये सक्तमहैतुकम् ।
अतत्त्वार्थवदल्प च तत्तामसमुदाहृतम् ॥ (१८/२२)

(ज) कर्म

२३ नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत् तत्सात्त्विकमुच्यते ॥ (१८/२३)

२४ यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः ।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ (१८/२४)

२५ अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहादारभ्यते कर्म यत् तत् तामसमुच्यते ॥ (१८/२५)

(झ) कर्ता

२६ मुक्तसंगोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥ (१८/२६)

२७ रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥ (१८/२७)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२१ जो ज्ञान सब भूतों में उसकी पृथक्ता के कारण (उन सब में एक सत्ता को न मानकर) अलग अलग प्रकार के अनेक भावों को देखता है, उस ज्ञान को राजस जानो।

२२ परन्तु जो ज्ञान किसी एक कार्य में ही सब कुछ मान लेता है, जो आसक्तिपूर्ण अहैतुक (बिना कारण) है, जो तत्त्वार्थ से रहित एवं अपूर्ण (सकीर्ण) है, वह तामस कहलाता है।

(ज) कर्म

२३ जो कर्म नियत (निश्चित) है, आसक्ति से रहित है, राग और द्वेष से रहित हो कर किया जाता है, जो फल-प्राप्ति की भावना के बिना किया जाता है, वह सात्त्विक कहा जाता है

२४ जो कर्म फल की प्राप्ति की इच्छा वाले व्यक्ति द्वारा अहङ्कार से युक्त हो कर किया जाता है और जिस में बहुत परिश्रम लगता है, वह राजस कर्म कहलाता है।

२५ जो कर्म परिणाम, नाश, हिंसा और सामर्थ्य विचार किए बिना केवल मोह के कारण आरम्भ किया जाता है, वह तामस कहलाता है।

(झ) कर्ता

२६ जो कर्ता आसक्ति से रहित है, अहङ्कार नहीं करता, धैर्य और उत्साह से युक्त है सफलता और असफलता में निर्विकार रहता हैं, वह सात्त्विक कर्त्ता कहलाता है।

२७ जो कर्ता राग युक्त है, कर्मों के फल की इच्छा रखता है, लोभी और हिंसात्मक वृत्ति वाला है, अपवित्र है, हर्ष और शोक से युक्त है, वह राजस कर्ता कहा गया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२८ अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः ।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥ (१८/२८)

(ञ) बुद्धि

२९ प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।
बन्धं मोक्ष च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥ (१८/३०)

३० यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ।
अयथावत् प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥ (१८/३१)

३१ अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसाऽऽवृता ।
सर्वार्थान् विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ १८/३२)

(ट) धृति (धैर्य)

३२ धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥ (१८/३३)

यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयतेऽर्जुन !
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ (१८/३४)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२८ जो कर्ता अयुक्तः (योग-रहित, चञ्चल स्वभाव वाला), साधारण हठी, दुष्ट, दूसरों का काम बिगाड़ने वाला आलसी, विषादी (सदा दुःखी रहने वाला) और दीर्घसूत्री (हर काम विलम्ब करने वाला) होता है, वह तामस कर्ता कहलाता है।

(ञ) बुद्धि

२९ हे पार्थ ! जो बुद्धि प्रवृत्ति मार्ग और निवृत्ति मार्ग को, कर्तव्य और अकर्तव्य को, भय और अभय को, बन्धन और मोक्ष को जानती है वह सात्त्विकी बुद्धि होती है।

३० हे पार्थ ! जिस बुद्धि से मनुष्य धर्म और अधर्म को, कर्तव्य और अकर्तव्य को ठीक २ नहीं समझ पाता, वह बुद्धि राजसी होती हैं।

३१ हे पार्थ ! अन्धकार से आवृत (अज्ञान से ढकी हुई) जो बुद्धि अधर्म को धर्म समझती है और सब अर्थों (बातों) को उल्टा देखती है, वह बुद्धि तामसी होती है।

(ट) धृति (धैर्य)

३२ हे पार्थ जो धृति अव्यभिचारिणी (एकनिष्ठ, इधर उधर न भटकने वाली) होती है और जिस से मनुष्य योग के द्वारा मन, प्राण और इन्द्रियों को धारण करता है (वश में रखता है) वह धृति सात्त्विकी होती है।

३३ हे पार्थ ! जिस धृति के द्वारा मनुष्य धर्म, अर्थ और काम को धारण करता है अर्थात् उन के साथ चिपका रहता है तथा आसक्ति रखता हुआ फल की आकांक्षा कामना) करता है, वह धृति राजसी होती हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३४ यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ।। (१८/३५)

(ठ) सुख

३५ यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ।। (१८/३७)

३६ विषयेन्द्रियसंयोगाद् यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव तत्सुख राजस स्मृतम् ।। (१८/३८)

३७ यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ।। (१८/३९)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३४ हे पार्थ ! जिस धृति के द्वारा दुर्बुद्धि मनुष्य निद्रा, भय, शोक, विषाद् (दुःख), और मद को नहीं त्याग सकता, वह धृति तामसिक होती है।

(ठ) सुख

३५ जो सुख आरम्भ में विष के समान होता है, परन्तु परिणाम में अमृत के समान होता है, जो आत्मा और बुद्धि के प्रसाद से प्राप्त होता है; वह सुख सात्विक होता है।

३६ जो सुख विषयों और इन्द्रियों के संयोग से उत्पन्न होता है; जो आरम्भ में अमृत के समान होता है, परन्तु परिणाम में विष के समान होता है; वह सुख राजसिक होता है।

३७ जो सुख आरम्भ और अन्त में आत्मा को मोह में फंसाये रखता है, जो निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न होता है, वह सुख तामसिक होता है।

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१२) कुछ विशिष्ठ श्लोक

१ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥ (२/४७)

२ यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ (९/२७)

३ तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तपरायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ (५/१७)

४ तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ (१८/६२)

५ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ॥
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ (४/२४)

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१२) कुछ विशिष्ट श्लोक

१ तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, उस के फल में नहीं। तू कर्म के फल का हेतु मत बन और तुम्हारी आसक्ति निष्कर्मण्यता में नहीं होनी चाहिए।

२ हे अर्जुन ! तू जो कुछ भी करता है, जो कुछ खाता है, जो हवन करता है, जो देता है, जो तप करता है, उस सब को मेरे अर्पण कर दें, ताकि तू उस के कर्मफल से मुक्त हो जाए।

३ जिन की बुद्धि उस परम ब्रह्म में ही रम जाती है, जिनकी आत्मा (मन, अन्तःकरण) उसी में लीन हो जाती है, जो ब्रह्मनिष्ठ और ब्रह्मपरायण हो जाते हैं वे अपने ज्ञान से पापों को धो डालते हैं और उस अवस्था में पहुंच जाते हैं जहां से फिर नहीं लौटा जाता (पुनर्जन्म नहीं होता)।

४ हे भारत ! तू सर्वभाव से (सर्वात्मना) उस परब्रह्म परमात्मा की ही शरण में जा उसकी कृपा से तू परम शान्ति और शाश्वत (नित्य) स्थान को प्राप्त करेगा।

५ ब्रह्म ही अर्पण (सुवा) है, ब्रह्म ही हवि है, (जीवन यज्ञ में) ब्रह्म द्वारा ही ब्रह्म रूपी अग्नि में हवन किया गया है; ब्रह्म रूपी कर्मसमाधि के द्वारा उसे ब्रह्म को ही प्राप्त करना है, वही उसका गन्तव्य है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भजनावली

(१)

(राग भैरवी—तीन ताल)

हे जग-त्राता, विश्व विधाता,
हे सुख-शान्ति-निकेतन हे !
प्रेम के सिन्धो, दीन के बन्धो,
दुःख - दरिद्र - विनाशन हे ! (ध्रु०)
नित्य, अखंड, अनन्त, अनादि,
पूरण ब्रह्म, सनातन हे !
जग-आश्रय, जग पति, जगबंदन,
अनुपम, अलख, निरंजन हे !
प्राणसखा, त्रिभुवन-प्रतिपालक,
जीवन के अवलंबन हे !

(२)

पितु मातु सहायक स्वामी सखा,
तुम ही इक नाथ हमारे हो।
जिन के कछु और आधार नहीं,
तिन के तुम ही रखवारे हो॥
सब भान्ति सदा सुखदायक हो,
दुःख - दुर्गुण - नाशन - हारे हो,
प्रतिपाल करो सिगरे जग को॥
अतिशय करुणा उर धारे हो॥
भूले हैं हम ही तुम को तुम तो,
हमरी सुध नाहीं बिसारे हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपकारन को कछु अंत नहीं,
छिन ही छिन जो विस्तारे हो ।।

महाराज महामहिमा तुम्हरी,
समझे विरले बुधवारे हो ।
शुभ - शान्ति - निकेतन प्रेमनिधे !
मनमन्दिर के उजियारे हो ।।

इस जीवन के तुम जीवन हो,
इन प्राणन के तुम प्यारे हो ।
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरि ।
केहि के अब और सहारे हो ।।

(३)

(राग बिलावल—तीन ताल)

चरन-कमल वन्दौं हरि राई ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लांघै, अंधे को सब कछु दरसाई ।।
बहिरो सुनै, मूक पुनि बोलै, रक चलै सिर छत्र धराई ।।
सूरदास स्वामी करुनामय बार बार वन्दौं तेहि पाई ।।

(४)

राग खंबावती—तीन ताल

प्रभु मोरे औगुन चित न धरो ।
समदरसी है नाम तिहारो, चाहे तो पार करो ।।
इक नदिया इक नार कहावत मैलो ही नीर भरो ।
जब मिली के एक बरन भये सुरसरि नाम धरो ।।
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो ।
पारस गुण अवगुण नहिं चितवत, कंचन करत खरो ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह माया भ्रम जाल कहावत सूरदास सगरो ।
अब की बेर मोहिं पार उतारो, नहि, प्रन जात टरो ।।

(५)

(राग टोड़ी—ताल दादरा)

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप पुंज-हारी ।।
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सो ?
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तो सो ।।
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर, हौं चेरो ।
तात-मात, गुरु-सखा तू सब विधि हित मेरो ।।
तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानियै जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु ! चरण-सरन पावै ।।

(६)

(राग पीलू —तीन ताल)

रघुवर ! तुम को मेरी लाज ।
सदा सदा मैं सरन तिहारी, तुम बड़े गरीबनिवाज ।
पतित-उधारन बिरद तिहारो, स्रवनन सुनी आवाज ।
हौं तो पतित पुरातन कहिये, पार उतारो जहाज ।।
अघ-खंडन, दुःख भंजन जन के यही तिहारो काज ।
तुलसीदास पर किरपा करिये भक्तिदान देहु आज ।।

(७)

(राग दरबारी कानड़ा—तीन ताल)

घूंघट का पट खोल रे ! तोको पीव मिलेंगे ।
घट घट में वह साँईं रमता कटुक वचन मत बोल रे ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धन-जोबन का गरब न कीजै झूठा पंचरंग चोल रे।
सुन्न महल में दियरा बारिले आसन सों मत डोल रे॥
जोग जुगुत सों रंग–महल में पिय पायो अनमोल रे।
कहै कबीर आनन्द भयो हैं, बाजत अनहद ढोल रे॥

(८)

(राग शंकरा–तीन ताल)

काहे रे बन खोजन जाई।
सर्वनिवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई॥ (ध्रु०)
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकुर माहिं जस छाई।
तैसे ही हरि बसैं निरंतर, घट ही खोजो भाई॥
बाहर भीतर एकै जानौ, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई॥

(९)

(राग तिलक कामोद–तीन ताल)

पायो जी मैं ने राम-रतन धन पायो॥ (टेक)
वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु,
किरपा कर अपनायो।
खरचै न खूटे, वाको चोर न लूटै,
दिन दिन बढ़त सवायो।
सत की नाव, खेवटिया सतगुरु,
भवसागर तर आयो।
मीराँ के प्रभु गिरिधर नागर,
हरख हरख जस गायो॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१०)

(राग काफ़ी–तीन ताल)

राम नाम रस पीजै,
मनुआ राम नाम रस पीजै।
तज कुसंग सत-संग बैठ नित,
हरि - चरचा सुनि लीजै ॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूं,
बहा चित्त सों दीजै।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर,
ताहि के रंग में जीजै ॥

(११)

(राग कौशिया—तीन ताल)

प्रभु जी ! तुम चंदन, हम पानी,
जा की अंग अंग बास समानी ॥
प्रभु जी, तुम घन बन, हम मोरा,
जैसे चितवत चंद चकोरा ॥
प्रभु जी, तुम दीपक, हम बाती,
जा की जोती बरै दिन राती।
प्रभु जी, तुम मोती, हम धागा,
जैसे सोन हि मिलत सुहागा ॥
प्रभु जी तुम स्वामी, हम दासा,
ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥

(१२)

(राग पहाड़ी—ताल कवाली)

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहां जो सोवत है। (ध्रु०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो सोवत है सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है ॥
टुक नींद से अखियाँ खोल ज़रा,
ओ ग़ाफ़िल रब से ध्यान लगा ।
यह प्रीत करन की रीत नहीं,
रब जागत है तू सोवत है ॥
अनजान भुगत करनी अपनी,
ओ पापी, पाप में चैन कहां ?
जब पाप की गठरी सीस धरी,
फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है ?
जो कल करना सो अज कर ले,
जो अज करना सो अब कर ले ।
जब चिड़ियन ने चुगि खेत लिया,
फिर पछताए क्या होवत है ।

(१३)

हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये ।
दूर कर के हर बुराई को भलाई दीजिए ॥
वेद के प्रचार से होवें सभी पुरुषार्थी,
होवे आपस में प्रीति और बनें परमार्थी ।
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित अपना भारत वर्ष देश,
वायु जल सुख-दायी होवे, जावें मिट सारे क्लेश ।
अच्छी संगत में रहे और वेद मार्ग पर चलें,
तेरे ही होवें उपासक, और कुकर्मों से बचें ।
कीजिये हम सब का हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से,
मान भक्तों में बढ़ाओ सब का भक्तिदान से ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

तिथि.....
पु०सं०.....

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१४)

जय जय पिता परम आनन्द-दाता,
जगदादि-कारण व मुक्ति-प्रदाता।
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे,
तू सृष्टि का स्रष्टा व धर्ता संहर्ता
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना,
कि जिस में यह ब्रह्माण्ड सारा समाता।
मैं लालित व पालित हू पितृ-स्नेह का,
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझ से ताता।
करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को,
करूं मैं विनय नित्य सायं व प्रातः।
मिटाओ मेरे भय यह आवागमन के,
फिरूं न जन्म पाता औ' बिलबिलाता।
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु,
कि जिस को मैं अपनी अवस्था सुनाता ?
अमी रस पिलाओ कृपा कर के मुझ को।
रहूं सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता॥

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१५)

आरती

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे !
भक्त जनों के संकट छिन में दूर करे।
ओं जय जगदीश हरे।

जो ध्यावे फल पावे दुख विनसे मन का। (ध्रु०)
सुख संपति घर आवे, कष्ट मिटे तन का।
ओं जय जगदीश हरे !

मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूं किस की,
तुम बिन और न दूजा, आस करूं जिस की।
ओं जय जगदीश हरे !

तुम पूर्ण परमात्मन्, तुम अन्तर्यामी,
पार ब्रह्म परमेश्वर तुम सब के स्वामी।
ओं जय जगदीश हरे !

तुम करुणा के सागर, तुम पालन-कर्ता,
मैं मूर्ख खल कामी, कृपा करो भर्ता,
ओं जय जगदीश हरे !

तुम हो एक अगोचर, सब के प्राण पति,
किस विधि मिलूं दयामय तुम को मैं कुमति।
ओं जय जगदीश हरे !

दीनबन्धु दुखहर्ता, ठाकुर तुम मेरे,
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।
ओं जय जगदीश हरे !

विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा,
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।
ओं जय जगदीश हरे !

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राष्ट्र-गान

(१)

वन्दे मातरम् ।
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्
शस्य-श्यामलाम् मातरम् ।
बन्दे मातरम् ॥
शुभ्रज्योत्स्नाम् पुलकितयामिनीम्,
फुल्ल-कुसुमित-द्रुमदलशोभिनीम् ;
सुहासिनीम् सुमधुरभाषिणीम्,
सुखदाम् वरदाम् मातरम् ।
वन्दे मातरम् ।
त्रिशंत्कोटिकण्ठ कलकलनिनाद कराले,
द्वित्रिशंत्कोटिभुजैर्धृतखरकरवाले ।
के बोले मा तुमि अबले ।
बहु बल धारिणीम्, नमामि तारिणीम् ।
रिपुदल-वारिणीम् मातरम् ॥ वन्दे मातरम् ।
तुमि विद्या, तुमि धर्म । तुमि हृदि, तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे ।
बाहु मे तुमि मा शक्ति ।
हृदये तुमि मा भक्ति ।
तोमारई प्रतिमा गडि,
मन्दिरे मन्दिरे मातरम् । बन्दे मातरम् ॥
त्वं हि दुर्गा दश प्रहरणधारिणी
कमल कमलादल हारिणी ।
वाणी विद्यादायिनी ! नमामि त्वाम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नमामि कमलाम् अमलाम् अतुलाम् ।
सुजलाम् सुफलाम् ॥ वन्दे मातरम् ॥
श्यामलाम् सरलाम् सुस्मिताम् भूषिताम् ।
वरणीम् भरणीम् मातरम् ॥ वन्द मातरम् ।

(२)

(राग भैरवी—ताल कहरवा)

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा ।
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥
सदा शक्ति बरसाने वाला,
प्रेम-सुधा सरसाने वाला,
वीरों को हरषाने वाला,
मातृभूमि का तन मन सारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥
स्वतन्त्रता के भीषण रण में,
लख कर जोश बड़े क्षण क्षण में,
धांपें शत्रु देख कर मन में,
मिट जाये भय संकट सारा
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥
इस झंडे के नीचे निर्भय
लें स्वराज्य हम अविचल निश्चय,
बोलें भारत माता की जय,
स्वतन्त्रता हो ध्येय हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥
आओ प्यारे वीरो ! आओ,
देश धर्म पर बलि बलि जाओ,
एक साथ सब मिल कर गाओ,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यारा भारत देश हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥

इसकी शान न जाने पाये,
चाहे जान भले ही जाये,
विश्व विजय हम कर दिखलायें,
तब होवे प्रण पूर्ण हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा ॥
विजयी विश्व तिरंगा प्यारा ॥

(२)

चरणों में प्रणाम माता चरणों में प्रणाम ।
भारत माता जग विख्याता तेरा कोई न सानी है ।
तू देवी. तू शक्ति भवानी, तेरी अद्भुत वाणी है ।
सुन्दर नदियां ऊंचे पर्वत, हरे भरे सुबह शाम ।
मात चरणों में प्रणाम ॥
हिमगिरि सिर पर ताज सुहावे, सागर तेरे चरण धुलावे ।
कौन कहे तू निर्बल नारी, वीर पुत्र तेरे रखवारे ।
कई करोड़ पुत्र है तेरे धर्म-वीर बलवान् ।
माता चरणों में प्रणाम ॥
सोना चांदी हीरे मोती, धूल तेरी में मिलते हैं.
विद्या ज्ञान कला औ' कौशल सब विध हम को मिलते हैं ।
ऐसा है वह कौन करे जो भारत माँ तेरा अपमान ।
माता चरणों में प्रणाम ॥

(४)

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा ।
हम बुलबुलें हैं इसकी, वह गुलिस्तां हमारा ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तिथि.....
पु०सं०.....
भारती पुस्तकालय

गुरबत में हों अगर हम रहता है दिल वतन में,
समझो वहीं हमें भी दिल हो जहाँ हमारा ॥
पर्वत वह सब से ऊंचा, हमसाया आसमां का,
वह सन्तरी हमारा, वह पासबां हमारा ॥
गोदी में खेलती हैं जिसकी हज़ारों नदियां,
गुलशन हैं जिन के दम से रश्केजिना हमारा ॥
ऐ आबे रोदे गंगा ! वह दिन है याद तुझ को,
उतरा तेरे किनारे जब कारवां हमारा ॥
मज़हब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना,
हिन्दी हैं, हम वतन है, हिन्दोस्तां हमारा ॥
यूनान मिस्रो रूमा सब मिट गये जहाँ से,
अब तक मगर है बाक़ी नामो निशां हमारा ॥
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे-जमां हमारा ॥
'इकबाल' कोई महरम अपना नहीं जहां में,
मालूम क्या किसी को दर्दे निहां हमारा ॥

(५)

मेरा देश महान् बने !

एक ध्येय हो, एक ज्ञेय हो, एक समान विधान बने !

एक देश हो, एक वेश हो,
प्राणवान हो सदुद्देश्य हो,
एक ध्यान हो निज गुरुता का,
एक हिमालय सी उठान हो,
मरण एक हो, वरण एक हो, जीवन एक समान बने !
मेरा देश महान बने ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सिंहों से लड़ने वाले हों,
अवसर पर अड़ने वाले हों,
हंसते हंसते मौत मसल कर,
आसमान चढ़ने वाले हों,
वज्र बनें दुश्मन को, प्रिय फूलों की मुस्कान बनें।
मेरा देश महान् बने !

उठें, देश के लिए उठें हम,
जिएं, देश के लिए जिएं हम,
गलें, देश के लिए गलें हम,
मरें, देश के लिए मरें हम,
तन में, मन में यही ध्यान हो 'भारत महिमावान् बने',
मेरा देश महान् बने !

रोज़ उषा हंस कर कहती है,
रोज निशा हंस कर कहती है,
महासृष्टि में यही स्वर्ग है—
भागीरथी जहां बहती है।
कोटि कोटि कल-कल कंठों से ध्रुवभेदी नवगान बने !
मेरा देश महान बने ॥

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राष्ट्र गीत

जन गण–मन अधिनायक जय हे,
भारत–भाग्य–विधाता !
पंजाब, सिन्धु, गुजरात, मराठा,
द्राविड़, उत्कल, बंगा,
विन्ध्य, हिमाचल यमुना गंगा
उच्छल जलधि-तरंगा,
तव शुभ नामे जागे,
तव शुभ आशिष माँगे,
गावे तव जय गाथा ।
जन–गण–मंगल दायक जय हे !
भारत–भाग्य–विधाता !
जय हे ! जय हे; जय जय जय हे ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विविध-धर्म परिचय

(क) वैदिक सनातन धर्म

१ वैदिक सतातन धर्म विश्व का सब से प्राचीन धर्म है। इस का आधार वेद हैं। इसी लिए इसे वैदिक धर्म कहा जाता है। यह विश्व में सब से प्राचीन है और शाश्वत है, इस लिए इसे सनातन धर्म कहा जाता है। इसे ही आर्य-धर्म अथवा हिन्दू धर्म भी कहा जाता है। 'आर्य' शब्द का अर्थ है 'श्रेष्ठ' और 'हिन्दु' शब्द का अर्थ है 'प्रत्यक्षतः या परोक्षतः वेदोक्त विचारों के आधार पर बने धर्म, आचार-व्यवहार, रीति-नीति, समाज-व्यवस्था आदि में विश्वास रखने वाला और उन पर आचरण करने वाला'।

२ वेद ईश्वरकृत और स्वतःप्रमाण हैं। वे सब विद्याओं के भण्डार हैं। उन का भाविर्भाव सर्वप्रथम अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामक ऋषियों की आत्मा में हुआ। उन की अनुकम्पा से ब्रह्मा, वसिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज, कण्व, गृत्समद, वामदेव आदि ब्रह्मर्षियों ने धर्म का साक्षात्कार किया और वे मन्त्रद्रष्टा अर्थात् यन्त्रार्थद्रष्टा कहलाए।

३ मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ सप्तर्षि कहलाते हैं। कुछ धर्मग्रन्थों में गौतम, भरद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ और अत्रि को सप्तर्षि कहा गया है।

४ वेदों का आविर्भाव-काल वही है जो सृष्टि का उत्पत्तिकाल है। सूर्यसिद्धान्त के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति १९५५८८५०६८ वर्ष पूर्व हुई।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

५ वेद चार हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

६ वैदिक संहिताओं के पश्चात् वैदिक साहित्य में मुख्य ग्रन्थ ब्राह्मण हैं जो निम्नलिखित हैं :—

(क) ऋग्वेद ऐतरेय ब्राह्मण और कोषीतकि ब्राह्मण

(ख) शुक्ल यजुर्वेद शतपथ ब्राह्मण

(ग) कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय ब्राह्मण

घ) सामवद ताण्ड्य ब्राह्मण

(ङ) अथर्ववेद गोपथ ब्राह्मण

Regd. No. 1672

७ वैदिक साहित्य अथवा श्रौत साहित्य का अन्य महत्त्वपूर्ण अंग उपनिषद् हैं। ये भारतीय अध्यात्मशास्त्र के देदीप्यमान रत्न हैं और इनका मुख्य विषय ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन है। मुख्य तथा अधिक प्रसिद्ध उपनिषद् ग्यारह हैं-ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर।

८ वेदाङ्ग छः हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष।

९ वैदिक संहिताओं पर अनेक देशी और विदेशी विद्वान् आचार्यों ने भाष्य लिखे हैं। भारतीय भाष्यकारों में से मुख्य हैं—महर्षि यास्क. आचार्य, सायण महीधर, स्कन्ध स्वामी, स्वामी दयानन्द सरस्वती,पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर,पं० जयदेव शर्मा आदि। विदेशी भाष्यकारों में से प्रसिद्ध हैं—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मैक्समूलर, मूर, विलसन, लुडविग, ग्रासमैन, ओल्डनबर्ग, ग्रिफ़िथ आदि ।

१० शास्त्र छः हैं—वैशेषिक, न्याय, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा अथवा वेदान्त । इन के क्रमशः प्रवर्तक थे—महर्षि कणाद, गौतम, कपिल, पतञ्जलि, जैमिनि और व्यास (बादरायण) ।

११ हिन्दू धर्म के अन्य प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं—रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतियां आदि ।

क) रामायण के मूल लेखक आदि कवि वाल्मीकि थे । अधिक प्रसिद्ध रामायणें निम्नलिखित हैं—

(१) वाल्मीकि-रामायण, (२) अध्यात्म रामायण, (३) राम चरित मानस अथवा तुलसी रामायण, (४) कम्भन रामायण ।

इन में से पहली दोनों संस्कृत में हैं तुलसी रामायण हिन्दी में है और कम्भन रामायण तामिल में ।

(ख) महाभारत विशालकाय ग्रन्थ है जिसके अठारह पर्व हैं । इसके लेखक महर्षि वेदव्यास कहे जाते है । श्रीमद्भगवद्गीता इसका ही एक भाग है जिसमें अठारह अध्याय हैं और सात सौ श्लोक ।

(ग) पुराण अठारह हैं—(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु (४) शिव, (५) भागवत, (६) नारदीय, (७) मार्कण्डेय, (८) (९) भविष्त, (१०) ब्रह्मवैवर्त, (११) लिङ्ग, (१२) वराह,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१३) स्कन्द, (१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड़ और (१२) ब्रह्माण्ड।

1672

(घ) स्मृति ग्रन्थ अथवा धर्म शास्त्र निम्नलिखित हैं:—

(१) मनुस्मृति, (२) अत्रिस्मृति, (३) विष्णुस्मृति, (४) हारीतस्मृति, (५) याज्ञवल्क्यस्मृति, (६) उशनस्मृति, (७) अङ्गिरास्मृति, (८) यमस्मृति, (९) आपस्तम्बस्मृति, (१०) संवर्तस्मृति, (११) कात्यायनस्मृति, (१२) बृहस्पति स्मृति, (१३) पराशरस्मृति, (१४) व्यासस्मृति, (१५) शखस्मृति, (१६) लिखितस्मृति, (१७) दक्षस्मृति, (१८) गौतमस्मृति, (१९) शातातपस्मृति और (२०) वसिष्ठ स्मृति।

१२ मध्य युग में शास्त्रीय भक्ति के प्रचारक आचार्य थे—
रामानुजाचार्य, स्वामी रामानन्द, निम्बार्काचार्य, विष्णुस्वामी, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, चैतन्य महाप्रभु और राधावल्लभ।

(ख) बौद्ध धर्म

१ बौद्ध धर्म के प्रवर्तक थे महात्मा गौतम बुद्ध। उनका असली नाम सिद्धार्थ था और वे शाक्यवशीय राजा शुद्धोधन के पुत्र थे। उनकी माता का नाम रानी मायावती था।

२ गौतम बुद्ध का जन्म ५६३ ई० पू० में हुआ।

३ महात्मा बुद्ध का मत मध्यम मार्ग कहलाता है। वे 'अहिंसा परमो धर्मः' के समर्थक थे। उन के सिद्धान्तों को आर्य सत्य और अष्टचक्र कहते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

16.72

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

४ महात्मा बुद्ध के वचनों के संकलन को 'त्रिपिटकं' कहा जाता है। त्रिपिटक के तीन भाग हैं—विनयपिटक, सुत्तपिटक और और अभिधम्भ पिटक।

५ बौद्ध धर्म की दो शाखाएं हैं—हीनयान और महायान। हीनयान बौद्धमत का विशुद्ध और प्राचीन रूप है। इस का प्रचार बर्मा, स्याम और सिंहल मे है। महायान का प्रचार तिब्बत, चोन, मंगोलिया, जापान आदि देशों में है!

(ग) जैन मत

१ जैन मत के प्रवर्तक ऋषभदेव थे। परन्तु उस का वास्तविक प्रचार और प्रसार चौबीसवें तीर्थङ्कर वर्धमान महावीर ने किया।

२ श्री वधमान महावीर का जन्म ५९९ ई० पू० वैशाली के नगर कुण्डग्राम में ज्ञातृक नामक क्षत्रिय राजकुल में हुआ। उन के पिता का नाम सिद्धार्थ और माता का त्रिशला था।

३ दया और अहिंसा जैन धर्म के मुख्य सिद्धान्त हैं। व्रत, उपवास और तपस्या का जैन धर्म में विशेष महत्त्व है।

४ जैनियों के दो सम्प्रदाय हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर।

५ जैनियों के मुख्य धर्मग्रन्थ हैं—द्वादशाङ्ग।

६ बौद्ध और जैन दोनों मतों का प्रवर्तन तत्कालीन आर्य धर्म में आ चुकी कुरीतियों तथा अन्ध-परम्पराओं के सुधार के लिए हुआ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(घ) पारसी

१ पारसी धर्म के प्रवर्तक ज़रतुश्त (ज़रथुस्ट) थे, जिन का जन्म ईरान में ६५० ई० पू० हुआ

२ ज़रतुश्त (ज़रथुस्ट) ने ज़ेंद-अवेस्ता की रचना की जो पारसियों की पवित्र धर्मपुस्तक है। जेंद अवेस्ता की भाषा कहीं कहीं वेद की भाषा के साथ मिलती जुलती है।

३ ज़रतुश्त ने न्याय, पवित्र विचारों, सत्कार्यों और भ्रातृभाव का प्रचार किया।

(ङ) यहूदी मत

१ यहूदी मत के प्रवर्तक हज़रत मूसा (मोज़े थे जिनका जन्म ईसा (जीसस) से बहुत पहले मिस्र में हुआ।

२ यहूदियों के अनुसार उन की मृत्यु १२० वर्ष की आयु में हुई

३ मूसा के जीवन की घटनाएं तथा उन के उपदेश बाईबल के पूर्वार्ध ओल्ड टैस्टामैण्ट में संगृहीत हैं।

४ मूसा के धर्मादेशों को टन कम्माण्डमेण्ट्स (दस विधि विधान) का नाम दिया जाता है।

(च) ईसाई धर्म

१ ईसाई धर्म का प्रवर्तन जीसस क्राईस्ट के नाम पर उन के अनुयायियों द्वारा हुआ। सेंट पाल ने ईसाई धर्म के प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण योग दिया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२ जीसस क्राईस्ट का जन्म बैथलम में ४ पू० ई० में हुआ। सन् २९ ई० में ३२-३३ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हो गया।

३ जीसस ने दया, पारस्परिक प्रेम, अपरिग्रह, न्याय आदि सद्गुणों का प्रचार किया।

४ जीसस के आश्चर्यपूर्ण कार्य तथा सिद्धान्त बाईबल के उत्तरार्ध (*New Testament*) में संगृहीत हैं।

५ बाईबल ईसाईयों की धर्म पुस्तक है।

16.72

(छ) इस्लाम

१ इस्लाम का प्रवर्तन हज़रत मुहम्मद ने किया।

२ हज़रत मुहम्मद का जन्म अरब के मक्का नामक नगर में सन् ५७० ई० में हुआ। उन के पिता का नाम अब्दुल्ला था और दादा का अबदल मोतालिब। उन की मृत्यु ६३२ ई० में हुई।

३ हज़रत मुहम्मद ने अपने समय में अरब में प्रचलित अन्धविश्वासों और रूढ़ियों का खण्डन किया और एकेश्वरवाद का प्रचार किया एवं अपने आप को पैग़म्बर (ईश्वर का दूत) घोषित किया।

४ मुसलमानों की दो धार्मिक पुस्तकें हैं 'कुरान शरीफ' और 'हदीस'। 'कुरान' उन के अनुसार ईश्वरीय ज्ञान है और 'हदीस' में हज़रत मुहम्मद के विचार संगृहीत हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ज) सिख

१ सिख मत हिन्दू धर्म की ही एक अवान्तर शाखा है जिस का प्रवर्तन गुरु नानक देव ने तत्कालीन कुरीतियों के सुधार के लिए किया।

२ गुरु नानक देव का जन्म १४६९ ई० को तलवंडी (ननकाना साहब) में हुआ। उन के पिता का नाम कालूराम और माता का तृप्ता था। गुरु नानक देव का देहान्त १५३८ ई० को हुआ।

३ सिख मत के दस गुरु हुए हैं—गुरु नानक, गुरु अंगद, गुरु अमर दास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव, गुरु हरगोबिन्द, गुरु हर राय, गुरु हरकृष्ण, गुरु तेगबहादुर और गुरु गोबिन्द सिंह।

४ 'सिक्खों का धर्मग्रन्थ 'ग्रन्थ साहब' है जिसका सम्पादन गुरु अर्जुन देव (१५८१-१६०६ ई०) ने किया। इस में सिख गुरुओं की वाणी के अतिरिक्त कबीर, नामदेव, फ़रीद, रविदास आदि सन्तों की वाणी भी संगृहीत है।

५ गुरु गोबिन्द सिंह ने खालसा पन्थ को चलाया और अपने पश्चात् 'ग्रन्थ साहब' को ही गुरु मानने का आदेश सिक्खों को दिया।

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राय साहिब चौ० प्रताप सिंह ट्रस्ट

द्वारा

प्रकाशि अन्य पुस्तकें

1 The Vedas : An Introduction (Prof. R.C. Sharma)
Price Rs. 1/60

2 अव्ययार्थनिबन्धनम् (स्वामी ब्रह्ममुनि) मूल्य एक रुपया

3 याज्ञवल्क्य शिक्षा (,,) मूल्य दो रुपये

4 महापुरुष कीर्तनम् (पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड) मूल्य दो रुपये

5 साम संगीत सुधा (,,) मूल्य ५० पैसे

6 Samaveda Samhita (Acharya Dharma Dev)
Vidya Martanda. Price 60 p

——

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.